चन्दामामा
अप्रैल १९७९

DADDY
MUMMY
AND...
I
" ये सब मैंने अपने एको स्केच पेन से बनाये हैं। "
EKCO
स्केच पेन
EKCO
SKETCH PEN
FOR
SKETCHING
COLOURING • SIGNING
रंग ही रंग... जिनसे बच्चों को प्यार है. वे चाहते हैं—नित नये चित्र बनाना.
अपने बच्चों की गुप्त कला को प्रोत्साहन दीजिए... उन्हें एको स्केच पेन का आकर्षक सेट उपहारस्वरूप दीजिए.
ये कई मनपसंद रंगों में मिलते हैं.
वितरक :
किरण एण्ड कंपनी,
७३/९, शामसेट स्ट्रीट, बम्बई ४०० ००२
फोन : ३२४४३२
एको स्केच पेन से लिखने का मज़ा ही कुछ और है.
ADVERTS/WP/216/HIN/38

चन्दामामा-कैमल रंग प्रतियोगिता

निःशुल्क प्रवेश

इनाम जीतिए

कैमल–पहला इनाम १५ रु.
कैमल–दूसरा इनाम १० रु.
कैमल–तीसरा इनाम ५ रु.
कैमल–आश्वासन इनाम ५
कैमल–सर्टिफिकेट १०

बिन्दुपूर्ण रेखाके साथ काटिये
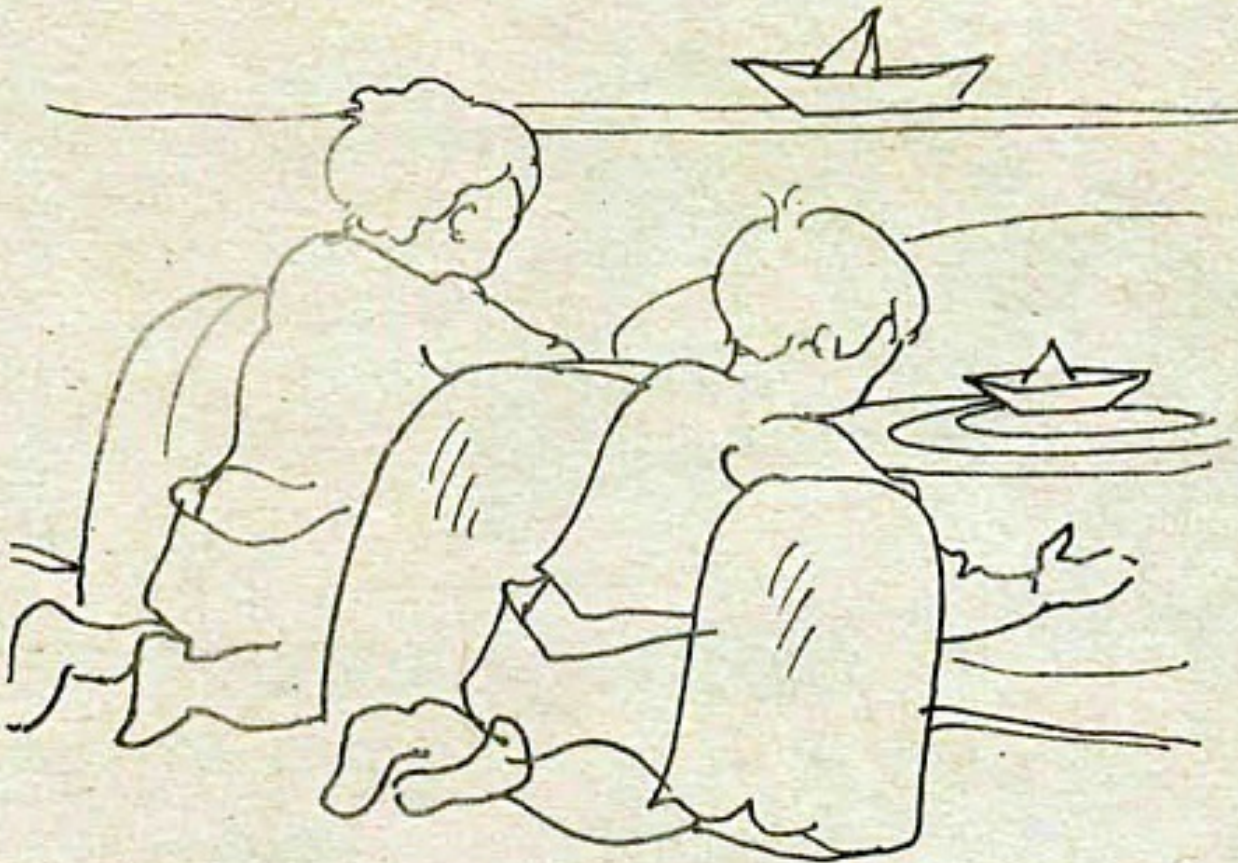
केवल १२ वर्ष तक के विद्यार्थी प्रतियोगितामें शामिल हो सकते हैं। उपर दिये गये चित्रमें अपने मनचाहे कैमल रंग भर दिजिए। अपने रंगीन प्रवेश-पत्र नीचे दिये गए पते पर भेजिए P.B. No. 9928, COLABA, Bombay-400 005.

परिणाम का निर्णय अन्तिम निर्णय होगा। और कोई भी पत्रव्यवहार, नहीं किया जाएगा।

Name..Age..................

Address...

कृपया अपना नाम और पता अंग्रेज़ी में लिखिए।

CONTEST NO. 6

कृपया ध्यान रखिए कि पूरा चित्र पेंट किया जाये।

चित्र भेजने की अंतिम तारीख: 30-4-1979

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'

संचालक : नागिरेड्डी

इस महीने की बेताल कथा "वामन" यह बताती है कि सभ्यता तो उधार लेने की वस्तु नहीं है। क्योंकि उसके अनुकूल जीवन-पद्धति और सामाजिक विश्वासों की भी अत्यंत आवश्यकता होती है।

अमर वाणी

सुकुलं, कुशलं, सुजनं विहाय,
कुल कुशल शील विकलोपि
आढये कल्पतरा विवनित्यं
रज्यंति जननिवहा: ।।

[उत्तम कुल, बुद्धिमत्ता तथा उत्तम गुणवाले लोगों का परित्याग करके जनसाधारण उत्तम कुल, बुद्धिमत्ता व सुगुणों के अभाव में भी धनी लोगों को कल्पवृक्ष के समान मानते हैं।]

वर्ष : ३१   अप्रैल १९७९   अंक : ८

एक प्रति : १-२५   : :   वार्षिक चन्दा : १५-००

नरसिंहमूर्ति, गुम्मडं (आंध्र)

प्रश्न: अतीन्द्रिशक्तियों के माने क्या हैं? उनकी उपयोगिता क्या है? क्या वास्तव में भूत होते हैं?

उत्तर: मानव में कुछ सहज शक्तियों का विश्वास करके उनके विपरीत शक्तियों को अगर हम किसी में देखते हैं तो उन्हें अतीन्द्रिय शक्तियाँ मानते हैं। जन्मांध व्यक्ति के लिए देखने की शक्ति अतीन्द्रिय शक्ति होती है। बिल्ली आदि निशाचर प्राणी घने अंधकार में भी देख सकते हैं। यदि मानव भी इस प्रकार देख पाता है तो उसके लिए वह अतीन्द्रिय शक्ति कहलाएगी। इसी प्रकार मानवों में भी अनेक प्रकार की अतीन्द्रिय शक्तियाँ देखी जाती हैं। इसी प्रकार भूतों के संबंध में कुछ लोग अपना विश्वास व्यक्त करके अंधविश्वासी कहलाते हैं। मगर श्राद्धकर्म करनेवाले सभी लोग भूतों पर विश्वास रखनेवाले ही होते हैं। मगर जो भूतों पर विश्वास नहीं रखते, उनसे बढ़कर भूतों पर विश्वास करनेवाले कोई महान कार्य साधते हैं, ऐसी कोई बात नहीं है!

यस. कनकाराव, पर्लाकिमिडि (ओरिस्सा)

प्रश्न: कहा जाता है कि देश में अनीति के बढ़ने के साथ कानून, विधान और नीति-सूत्र भी बढ़ते जाते हैं। यह कहाँ तक सत्य है?

उत्तर: यह पूर्ण सत्य है! समाज में जब तक एक प्रकार की अनीति नहीं फैलती, तब तक उसके विरुद्ध विधान बनाने की आवश्यकता नहीं होती। संपत्ति पर अधिकार न रखनेवाली जंगली जातियों में चोरियाँ नहीं होतीं, उनके लिए दण्ड भी नहीं होता। गोमांस भक्षण पर सर्व प्रथम प्रतिबंध लगाने का कारण उस समय गोमांस भक्षण का विद्यमान रहना ही है! इसी प्रकार अपराध जितनी मात्रा में अधिक होते हैं, उतनी ही मात्रा में कानून और विधान भी अधिक होते हैं। अनीति जितनी मात्रा में अधिक होती है, उसी मात्रा में नीति-सूत्र अधिक हो जाते हैं। हमारे देश में हिन्दू नारियों का पराये पुरुष की दृष्टि में पड़ना अनीति नहीं है। इसीलिए यहाँ पर्दे की प्रथा की नीति नहीं है। जहाँ वह अनीति होती है, वहाँ उसके लिए दण्ड भी होता है।

लब्ध प्रणाशं

[६९]

इसके बाद किसान की पत्नी और उसका दुष्ट प्रेमी आगे बढ़े। रास्ते में एक नदी आ पड़ी। वहाँ पर नाव तो थी, पर मल्लाह न था।

दुष्ट ने कहा–"प्रिये, मैं पहले तुम्हारा धन और क़ीमती साड़ियाँ उस पार रखकर लौट आऊँगा और तब तुम्हें ले जाऊँगा।"

यों समझा कर वह दुष्ट व्यक्ति नदी के उस पार पहुँचा और लौटकर नहीं आया। इतने में किसान की पत्नी ने एक दृश्य देखा।

एक सियारिन अपने मुँह में मांस का टुकड़ा दबाये चली आयी। उसी वक़्त एक बड़ी मछली उछल कर भूल से नदी के किनारे आ गिरी। सियारिन मांस के टुकड़े को एक स्थान पर रखकर मछली की ओर बढ़ी। सियारिन को देख मछली डर गई और वह फिर से नदी में कूदकर भाग गई। इस पर सियारिन अपने मांस के टुकड़े की ओर चली आई। मगर उस वक़्त कहीं से एक गीध उड़ता हुआ आया और मांस के टुकड़े को उड़ाकर चला गया।

मगरमच्छ ने यों अपनी कहानी समाप्त की, उस वक़्त एक और जलचर ने वहाँ प्रवेश करके बताया–"तुम्हारे घर पर एक और मगरमच्छ ने क़ब्जा कर लिया है।"

यह समाचार सुनकर मगरमच्छ बोला–"भाग्य मेरे प्रतिकूल है। मैं अपने मित्र को खो चुका, पत्नी मर गई और मेरा घर दुश्मन के हाथ चला गया। अब मैं उस बंदर से कोई सलाह लेता हूँ।" यों सोचकर मगरमच्छ ने बंदर के सामने अपनी समस्या रखी।

बंदर ने स्पष्ट बताया–"तुमने मेरे साथ दगा करना चाहा, इसलिए तुम मेरी सलाह पाने योग्य नहीं हो।"

इस पर मगरमच्छ रोते हुए बोला–"तुम्हारा जिसने अपकार किया, उसका अपकार करने से तुम्हें पुण्य प्राप्त होगा।"

"अरे मूर्ख! यह रोते बैठने का वक़्त नहीं है; तुम्हें कुछ न कुछ प्रयत्न करना होगा। हिम्मत करके तुम अपने दुश्मन के साथ लड़ो। शत्रु पर विजय पाने के लिए उसके सामने साष्टांग दण्डवत करना है, अगर वह बलवान हो तो उस पर किसी और को उकसाना होगा। अगर वह नीच व्यक्ति है तो उसे रिश्वत देना होगा। समान व्यक्ति हो तो उसके साथ जूझना होगा। तुम्हें मैं सियार की कहानी सुनाता हूँ।"

इन शब्दों के साथ बंदर ने यों सुनाया :

सियार–चार दुश्मन

एक जंगल में महाचमरक नामक एक सियार रहा करता था। एक बार जंगल में घूमते उसने एक मृत हाथी को देखा। मोटी परतवाले हाथी के चमड़े को निकालने की शक्ति सियार में न थी। सियार को कुछ न सूझा; तभी उधर से गुजरता हुआ एक सिंह दिखाई पड़ा।

सियार सिंह के सामने साष्टांग दण्डवत करके बोला–"प्रभु! मैं आप ही के वास्ते इस हाथी का पहरा दे रहा हूँ।"

"दूसरे लोग जिस जानवर को मारते हैं, मैं उसे कभी छूता तक नहीं। इसलिए तुम मेरी तरफ़ से इसे मेरे पुरस्कार के रूप में ले लो।" सिंह ने कहा।

सियार खुश होकर बोला–"आप तो बड़े ही उदार सम्राट हैं। अपने सेवकों के प्रति ऐसी ही कृपा रखते हैं।"

अपनी तारीफ़ सुनकर सिंह फूला न समाया और अपने रास्ते चला गया। इसके बाद एक बाघ उधर से आ निकला। उसे देख सियार ने अपने मन में यों सोचा–"एक क्रूर स्वभाव वाले जानवर के सामने झुककर प्रणाम करके बच गया। लेकिन इस बाघ से कैसे पिंड छुड़ा सकता हूँ। इन दोनों के बीच झगड़ा पैदा करना है।"

यों विचार कर सियार बाघ के समीप गया और बोला–"मामाजी! सिंह ने इस हाथी को मार डाला है। उसने मुझे इसका पहरा देने के लिए तैनात किया, वह अभी स्नान करने गया हुआ है। जाते-जाते मुझसे कह गया है–"इधर से अगर बाघ आ निकले तो तुम गुप्त रूप से यह समाचार मुझे दो। बाघों से मुझे चिढ़ है।"

ये बातें सुन बाघ घबराकर बोला–"अरे दामाद! तुम मेरी जान बचाओ।" यों कहते वह तेज़ी से भाग गया।

बाघ के जाते ही उधर एक चीता आ पहुँचा। उसे देख सियार सोचने लगा–"इस चीते के दाढ़ बड़े ही पैनी हैं। इसके द्वारा मैं इस हाथी का चमड़ा निकालवा देता हूँ।" यों विचार कर चीते से बोला–"अजी दामाद! मेरा आतिथ्य स्वीकार करके इसका मांस भर पेट खा लो। इस हाथी को सिंह ने मार डाला है। इसके कलेवर का पहरा देने के लिए सिंह मुझे तैनात करके चला गया है। उसके आने के पहले तुम अपना पेट भरकर भाग जाओ।"

चीते ने हाथी का मांस खाने के लिए उसका चमड़ा उधेड डाला। तब सियार चिल्ला उठा–"हे मेरे दामाद! तुम भाग जाओ। सिंह चला आ रहा है।" ये

बातें सुन चीता डर के मारे भाग गया। तब सियार हाथी का मांस मज़े से खाने लगा। तभी कहीं से एक दूसरा सियार हाथी का मांस खाने को आ धमका।

पहले सियार ने दूसरे सियार पर हमला किया और उसे मारने के बाद इतमीनान से हाथी का मांस खा डाला।

बन्दर ने मगरमच्छ को यह कहानी सुनाकर समझाया–"दुश्मन ने तुम्हारे घर पर क़ब्जा कर लिया हो, या अकाल पड़ गया हो, या कोई विपत्ति आ गई हो, अपने निज निवास को मत छोड़ो। अपने देश को छोड़ जानेवाले कुत्ते की कहानी की याद रखो।"

"वह कैसी कहानी है?" मगरमच्छ के पूछने पर बंदर ने यों समझाया :

देश छोड़नेवाले कुत्ते की कहानी

एक शहर में चित्रांग नामक एक कुत्ता आराम से अपने दिन गुजारा करता था। कई साल बाद उस शहर में भयंकर अकाल पड़ा। दुश्मन का डर भी पैदा हो गया। कुत्ते को खाने को कुछ न था, इसलिए वह आराम से जीने के ख्याल से किसी दूसरे शहर में चला गया।

एक बड़े मकान के रसोई घर के किवाड़ खुले हुए थे। कुत्ते ने अंदर जाकर देखा। खाने के लिए कई तरह के व्यंजन तैयार थे। कुत्ते ने भर पेट खा लिये और सबकी आँख बचाकर चला गया।

पर ज्यों ही वह कुत्ता बाहर आया त्यों ही गाँव के अन्य कुत्तों ने उस पर हमला किया और उसे काटकर परेशान किया। तब कुत्ते ने यों सोचा–"चाहे अकाल आये, फाका करना पड़े, अपने निजी स्थान पर रहना हमेशा अच्छा होता है। रिश्तेदारों का आदर मिलता है। पर पराये स्थान पर अन्य कुत्तों के द्वेष के अतिरिक्त और क्या होता है?"

यों विचार कर वह कुत्ता अपने गाँव को फिर लौट आया। उसे देख साथी कुत्तों ने पूछा–"तुम पराये देश में गये थे न, वहाँ का हाल कैसा है?"

"वहाँ पर सब प्रकार के व्यंजन हैं, खाने का मजा भी है। लेकिन उन विदेशी कुत्तों में मैत्री भाव नहीं है। आत्मसम्मान रखनेवाला इस गाँव का कोई भी कुत्ता वहाँ पर रहने को कभी नहीं जाएगा।" कुत्ते ने अपना अनुभव सुनाया।

बंदर ने यह कहानी सुनाकर मगरमच्छ को समझाया–"तुम अपने घर लौट जाओ। अपने दुश्मन से लड़कर उसे मार डालो, तब आराम से रहो।"

इस पर मगर मच्छ दृढ़ निर्णय के साथ पानी में कूद पड़ा, अपने दुश्मन के साथ भयंकर युद्ध करके उसे मार डाला और सुखपूर्वक अपना शेष जीवन बिताने लगा।

भल्लूक मांत्रिक

[९]

[हाथी ने अंग रक्षक का पीछा किया, वह भागते हुए उग्रदण्ड के समीप पहुँचा। इस बीच राजा दुर्मुख होश में आया और जंगल में भाग गया। वहाँ पर एक जंगली शिकारी ने चीते पर तीर चलाया। चोट खाकर चीता तो दुर्मुख के साथ डालों पर से नीचे गिर पड़ा। बाद...]

राजा दुर्मुख तथा चोट खाये चीते के डाल पर से नीचे गिरते ही अंग रक्षक उछल पड़ा और चिल्लाकर बोला– "अबे, तुम लोग देखते क्या हो? एक बाण और चलाकर चीते को मार डालो।"

उधर दुर्मुख पेड़ पर से एक झाड़ पर गिर पड़ा, वहाँ से फिसलकर जमीन पर लुढ़क पड़ा, जिस वजह से वह घायल नहीं हुआ।

अंग रक्षक ने चीते की ओर अपनी क्रुद्ध दृष्टि दौड़ाकर गरजकर कहा– "महाराज! गहरी चोट ख़ाकर भी चीता आप पर हमला करने के प्रयत्न में है! अब हम क्या करें?"

राजा दुर्मुख चीते से बचकर दूर चला गया। अंग रक्षक की ओर तीक्ष्ण दृष्टि दौड़ाकर डांटा–"अबे, क्या तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है? तुम इसी वक़्त तलवार

उसने धनुष पर तीर चढ़ाकर अंग रक्षक की ओर निशाना साधा, तब पूछा—"तुम इनको महाराजा पुकारते हो! क्या तुम इनके साथ मजाक़ करते हो या सचमुच ही ये महाराजा हैं?"

अंग रक्षक ने भांप लिया कि चीता एक बार और राजा दुर्मुख पर हमला करने की कोशिश कर रहा है, झट से उसने तलवार खींची और राजा से कहा—"महाराज! आप भी म्यान से तलवार खीचकर चीते के साथ लड़ने को तैयार हो जाइये, वरना चोट खाया हुआ यह चीता एक साथ हम दोनों को मार डाले तो इसमें आश्चर्य की कोई बात न होगी!" यों सचेत कर उसने एक क़दम चीते की ओर आगे बढ़ाया।

उसी वक़्त जंगली शिकारी ने अंग रक्षक के सामने पृथ्वी में धंसने लायक़ एक बाण छोड़ा, अपनी तरकस में से एक बाण और निकालकर उसकी ओर निशाना लगाकर बोला—"तुमने मेरे सवाल का जवाब क्यों नहीं दिया? मेरा तीर इसी वक़्त तुम्हारी जान ले लेगा! तुम जिसे राजा बताते हो, उसका कंठ कुतरकर यह खूंख्वार चीता किसी नाले के पास पहुँचेगा और वह भी घाव की पीड़ा से दम तोड़ बैठेगा।"

खींचकर उसका सर काट डालो। क्या यह जंगली शिकारी हमारे ही राज्य का है? देखने में तो यह निरा मूर्ख मालूम होता है।"

इस बीच चीता अपने दाढ़ फैलाकर गुर्राते एक-एक क़दम आगे बढ़ाते हुए राजा दुर्मुख की ओर चल पड़ा। तब तक उस दृश्य को चुपचाप देखनेवाला जंगली शिकारी धीरे से मुस्कुरा उठा, तब बोला—"मैं भले ही मूर्ख हूँ, पर ऐसा वज्र मूर्ख नहीं हूँ कि सोने के मोहरों की क़ीमत न जानते हो। मुझे जो पाँच मोहरे देने का वादा किया था, उसका क्या हुआ? इसी वक़्त मुझे देते क्यों नहीं?" यों कहते

राजा दुर्मुख तलवार खींचकर चीते की ओर बढ़ा, फिर अंतिम क्षण में डरकर पीछे की ओर मुड़ते हुए बोला—"अबे जंगली शिकारी! अभी समझ लो, मैं उदयगिरि के राजा दुर्मुख ही हूँ। क़िस्मत ने मेरा साथ नहीं दिया; इस कारण जंगलों में भटकते ... यातनाएँ झेल रहा हूँ। लगता है कि तुम्हारे तीर की चोट चीते के कलेजे पर नहीं लगी। एक और तीर चलाकर उसे मार डालो।"

"आप ने पहले ही क्यों नहीं बताया? बिना सेना के जंगलों में आना आप की बड़ी भारी भूल थी।" यों समझाकर जंगली शिकारी ने अंग रक्षक की ओर से बाण का निशाना चीते की तरफ़ मोड़कर छोड़ना चाहा, तभी वह गरजकर राजा की ओर कूद पड़ा। पर निशाना चूक जाने के कारण वह तीर एक पेड़ के तने में जा फंसा।

राजा दुर्मुख चीते के हमले से भयभीत हो चीख उठा और पीछे मुड़कर बेतहाशा भागने लगा। चीते ने उसका पीछा किया। थोड़ी दूर तक एक के पीछे एक भागते गये। तभी उधर से आनेवाले राक्षस उग्रदण्ड ने तपाक से राजा को एक हाथ से थाम लिया और डांटा—"राजा दुर्मुख! कमबख्त चीते को देख कायर की भांति

भागते जा रहे हो? क्या तुम भी कोई राजा हो?"

राजा दुर्मुख आपाद मस्तक कांपते हुए कुछ कहने को हुआ, पर इस बीच घाव की पीड़ा से उकसा गया चीता तीर की भांति उसके समीप आया। उग्रदण्ड ने चीते पर ऐसी लात मारी कि वह उछलकर नीचे गिर पड़ा। तभी लपककर उसने चीते का गला पकड़ लिया और राजा से बोला—"देश पर शासन करनेवाले तुम से कहीं ज्यादा यह क्षुद्र जानवर हिम्मतवर मालूम होता है!"

राजा दुर्मख राक्षस की पकड़ से बचने के लिए खींचातानी करते हुए बोला—"जी हाँ, राक्षस उग्रदण्ड! इसमें आश्चर्य करने

की बात ही क्या है? तुम्हारे ही शब्दों में मैं तो एक राजा हूँ और यह एक क्षुद्र जानवर है न?"

थोड़ी देर में वहाँ पर चोरों का सरदार नागमल्ल, उसके दो अनुचर और उनके पीछे बधिक भल्लूक भी आ पहुँचे। नागमल्ल दुर्मुख की ओर देख भयभीत होने की दृष्टि प्रसारित करते हुए बोला– "अब जाकर आप ने खुद अपने मुँह से बताया कि आप दुर्जय गुप्त नहीं, महाराजा दुर्मुख हैं। इसलिए आप को हम सुरक्षित रूप से राजधानी नगर में पहुँचा देंगे। आप जो उचित समझें, वही पुरस्कार हमें दे दीजिएगा!"

ये बातें सुनते ही बधिक भल्लूक चिल्ला उठा–"सिरस भैरव!" फिर परसु उठाकर बोला–"अबे, तुम सब लोग कान खोलकर सुन लो! इस दुर्मख राजा के सिर का इंतज़ार हमारे गुरु भल्लूक मांत्रिक करते होंगे। मैं उसका सर काटकर ले जाऊँगा। तुम्हें तो अपने साथ इसका धड़ ही राजधानी में ले जाना होगा! तब तुम्हें मिलनेवाला पुरस्कार क्या होगा, जानते हो? अच्छी तरह से कान खोलकर सुन लो! इस राजा के वारिसों के द्वारा तुम्हारा शिरच्छेद!"

"ओह बधिक भल्लूक! तुमने बड़ी अक़्लमंद की बात कही!" यों कहकर अपनी मुट्ठी में छटपटानेवाले चीते को दूर फेंककर अपने चतुर्दिक इकट्ठे हुए लोगों की तरफ़ एक बार देखते हुए राक्षस उग्रदण्ड ने कहा–"असहाय स्थिति में रहनेवाले इस दुर्मुख राजा का सर बधिक भल्लूक का काटने की बात सोचना न्याय संगत प्रतीत नहीं होता! तुम लोगों की राय क्या है?"

बधिक भल्लूक को छोड़ बाक़ी सबने राक्षस उग्रदण्ड के कथन का समर्थन किया। इस पर बधिक भल्लूक ने दीनतापूर्ण चेहरा बनाकर अपने परसु को नीचे सरका दिया, तब बोला–"तब तो मेरा क्या हाल

होगा? महान शक्ति संपन्न भल्लूक मांत्रिक ने अपने मंत्र के बल पर मुझ मानव को यों भल्लूक के रूप में इसलिए बदल डाला था कि मैं इस राजा का सर काटकर ले जाऊँ? अगर मैं उनके इस आदेश का पालन न कर खाली हाथ लौट जाऊँगा तो वे महान मांत्रिक या तो मेरे प्राण ले लेंगे या ज़िंदगी भर मुझे यों भल्लूक के रूप में ही छोड़ देंगे। हाय! तब मेरी हालत क्या होगी?"

"यह बात भी सही है! तो फिर और उपाय क्या है? बताओ तो सही?" उग्रदण्ड राक्षस ने पूछा।

अंग रक्षक कांपते हुए उग्रदण्ड के सामने आकर खड़ा हो गया और बोला—"उग्रदण्ड महाराज! मेरा एक सुझाव है! इस महाराजा को प्राणों के साथ उस मांत्रिक के पास ले जाना उचित होगा! मांत्रिक ही उस सर की बात निर्णय कर लेंगे।"

"यह सुझाव तो बड़ा ही अच्छा है। बधिक भल्लूक! तुम्हारा क्या विचार है?" उग्रदण्ड ने पूछा।

"इस भयानक जंगल को पार कराकर इस राजा को भल्लूक मांत्रिक के यहाँ ले जाना कोई सरल काम थोड़े ही है? यह किसी भी क्षण मुझे चकमा देकर भाग सकता है। इसके पूर्व ही इसने ऐसा प्रयत्न किया था, लेकिन चीते की कृपा से फिर यह मेरे हाथ लग गया है।" यों कहते बधिक भल्लूक ने दुर्मुख की ओर एक क़दम बढ़ाया।

दुर्मुख चीखकर उग्रदण्ड के पीछे जा खड़ा हुआ और कंपित स्वर में बोला—"उग्रदण्ड महाराज! मैं आप की शरण में आया हूँ। मुझे बचाइये।"

"मैंने तुम्हें अभयदान दिया है! तुम डरो मत!" इन शब्दों के साथ राक्षस उग्रदण्ड ने राजा का सर स्पर्श किया, फिर बधिक भल्लूक से बोला—"बधिक भल्लूक! इस राजा को तुम्हारे साथ मांत्रिक के पास ले जाने की जिम्मेदारी मैं लेता हूँ।

सिंह ने हाथी का कुंभ स्थल शायद चकना चूर कर दिया होगा!"

"ओह, ऐसी बात है?" ये शब्द कहकर बधिक भल्लूक चौंक पड़ा। दौड़कर वह हाथी के समीप पहुँचा। एक सिंह रस्सों से बंधे हाथी के चारों तरफ़ पल्थी मारते बीच बीच में हाथी के सर पर अपने पंजे का प्रहार करने का प्रयत्न कर रहा था। हाथी चिंघाड़ते अपनी कटी सूंड को सिंह की ओर फैलाकर उसे पकड़ने की कोशिश करते अपने बंधन तुड़वाने की सोच रहा था।

उस दृश्य को देख बधिक भल्लूक रौद्र स्वर में चिल्लाकर बोला—"ओह, मुझ जैसे व्यक्ति के वाहन को ही खाना चाहते हो?" यों कहते परसु उठाकर बधिक भल्लूक सिंह की ओर कूद पड़ा।

सिंह उस विचित्र भल्लूक को देख घबरा गया और वह दो क़दम पीछे की ओर हट गया। मगर इतने में ही बधिक भल्लूक परसु उठाये वेग से आया और सिंह पर आक्रमण करने को हुआ। सिंह भी क्रोध में आकर गरजते हुए बधिक भल्लूक पर उछल पड़ा। बधिक ने उसकी ओर अपना परसु फेंका, पर वह चूककर सिंह की एक पिछली टांग पर लग गया। सिंह नीचे गिर पड़ा, दूसरे ही क्षण

तुम अपने वाहन सूंड कटे हाथी पर सवार हो रवाना हो जाओ। इस राजा के साथ मैं पैदल चला आता हूँ।"

"उग्रदण्ड! अपने वचन का पालन करोगे न? लो, मैं अभी जाकर अपने वाहन में बंधे रस्सों को काटकर उसे यहीं ले आता हूँ।" यों कहते बधिक भल्लूक चल पड़ा।

उसके पीछे जंगली शिकारी धनुष पर बाण चढ़ाकर जल्दी डग भरकर बोला—"अबे, बधिक भल्लूक! तुम जल्दबाजी में आकर असावधानी से उस हाथी के समीप मत जाओ। तुम लोगों ने वार्तालाप में निमग्न होकर सिंह का गर्जन और हाथी का चिंघाड़ सुना न होगा। इस बीच

तड़पकर उठ खड़ा हुआ। दुबारा बधिक पर वार करने को हुआ। तभी जंगली शिकारी ने सिंह के कलेजे पर निशाना साधकर बाण छोड़ा।

बाण की चोट खाकर सिंह एक ओर लुढ़क पड़ा। वह भीकर गर्जन करते फिर से उठने को हुआ, बधिक भल्लूक ने उसके कंठ पर परसु का वार किया।

सिंह ने उठकर खड़े होने का प्रयत्न किया, पर उसका कंठ आधा कट चुका था, इस कारण लुढ़ककर छटपटाने लगा। बधिक भल्लूक पुन: उस पर अपने परसु का प्रहार करने को हुआ। तब जंगली शिकारी ने उसका हाथ पकड़कर रोकते हुए कहा–"ओह, भल्लूक साहब! तुम्हारी यह कैसी हिम्मत है? सिंह तो बेदम हो चुका है। उस पर फिर से वार करके उसका चमड़ा बिगाड़ो मत। मुझे उसके आयाल और चमड़ा चाहिए।"

बधिक भल्लूक हांफते बोला–"भाई, तुम्हारे तीर का निशाना अचूक है। तुम अगर अकेले ही प्राणी हो तो मेरे साथ चन्द्रशिला नगर में क्यों न आ जाते? मैं राजा को समझाकर तुमको अपने सहायक बधिक का पद दिलाऊँगा।"

जंगली शिकारी ने सर झुकाकर उत्तर दिया–"मैं तुम्हारे साथ जरूर राजधानी

में जाऊँगा। अगर नौकरी करनी ही है तो तुम जैसे वीर के यहाँ ही करनी है!"

बधिक भल्लूक कहने को था, उग्रदण्ड अन्य लोगों के साथ वहाँ प्रवेश करके बोला–"ओह! बधिक भल्लूक को तो बड़ा अच्छा सेवक मिल गया है।"

अपनी तारीफ़ सुनकर बधिक भल्लूक फूला न समाया, परसु उठाकर बोला–"अबे नागमल्ल! तुम और तुम्हारे अनुचर अभी जाकर मेरे वाहन के बंधनों को खोल दो।"

"भल्लूक साहब! तुम्हारी आज्ञा सर आँखों पर है! लेकिन बंधन के खोलते ही वह हम पर हमला करके कुचल न दे,

इसकी जिम्मेदारी तुम पर है।" चोरों के सरदार ने कहा।

"अरे, मेरा आज्ञाकारी वाहन मेरी अनुमति के बिना दूसरों की हानि कर बैठेगा?" यों कहकर हाथी के समीप पहुँचा। जंगली चोरों ने हाथी के बंधन खोल दिये, तब वह हाथी की पीठ पर जा बैठा।

कटी सूंडवाला हाथी अपने बंधनों के खुलते ही चिघाड़ते हुए उठ खड़ा हो गया। बधिक भल्लूक ने जंगली शिकारी को हाथ का इशारा देकर निकट बुलाया। तब आदेश दिया-"अबे, जंगली सेवक! तुम जंगल के इन रास्तों से खूब परिचित हो! तुम मेरे वाहन के कुंभस्थल पर सवार हो चन्द्रशिला नगर का रास्ता बता दो।" फिर राक्षस उग्रदण्ड की ओर मुड़कर बोला-"सुनो, राजा दुर्मुख को भागने से रोककर मेरे पीछे ले आने की जिम्मेवारी तुम्हारी ही है न?"

राक्षस उग्रदण्ड ने सर हिलाकर स्वीकृति देते हुए कहा-"सुनो, भल्लूक मांत्रिक के साथ मेरा एक काम है! तुम हाथी पर आगे बढ़ो! हम सब तुम्हारे पीछे चलते हैं। जो हमारे साथ जाना नहीं चाहते, वे जंगल का रास्ता तै करने के बाद अपने अपने रास्ते जा सकते हैं।"

"वाह, तुमने लाख टके की बात बताई! राजा दुर्मुख को छोड़ मैं बाक़ी सब को इसी क्षण स्वतंत्र कर देता हूँ। चाहे तो यहाँ पर जंगली जानवरों के बीच मजे से जी सकते हैं।" यों समझाकर हाथी को हांक लगाकर दौड़ाया।

सूंड कटा हाथी तेजी से दौड़ने लगा। इस कारण बाक़ी सब लोग थोड़ा पीछे रह गये। इस बीच पेड़ों की ओट में से आकर अचानक दो हाथियों ने बधिक भल्लूक को रोका। उन हाथियों पर जो चार सैनिक सवार थे, चिल्लाकर बोले-"उदयगिरि के महाराजा की जय!" यों जयकार करते उन सैनिकों ने बधिक भल्लूक पर तीरों की वर्षा की।

(और है)

वामन

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ पर से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन, मैं नहीं जानता कि आप किसका उद्धार करने के लिए यों श्रम कर रहे हैं? लेकिन बात कुछ ऐसी है कि कुछ लोग अपना उद्धार तो स्वयं नहीं चाहते, बल्कि अपना उद्धारकर्ताओं को दुश्मन मानते हैं। इसके उदाहरण स्वरूप मैं आप को वामन नामक जंगली जाति की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिए।"

बेताल यों सुनाने लगा: वामन हिमालयं के जंगलों में निवास करनेवाली एक जाति के लोग हैं। उनकी जीवन पद्धति जंगल के अनुकूल थी और उनकी आवश्यकताएँ भी जंगल में प्राप्त होनेवाली संपत्ति के

बेताल कथाएँ

अनुकूल थीं, इस कारण सैकड़ों वर्ष बीत जाने पर भी उनकी ज़िंदगी में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। वे लोग सभ्यता के बारे में कुछ भी जानते न थे।

मगर उस जाति के नेता शेरसिंह का पुत्र जयसिंह दूर पर स्थित विजयपुरी नामक राज्य में गया, वहाँ की सभ्यता से परिचित हुआ। उसी प्रकार की ज़िंदगी बिताने के ख्याल से वह विजयपुरी के राजा चंडसेन के दरबार में नौकर बना।

थोड़े दिन बीत गये। जयसिंह के मन में अपने पिता को देखने की इच्छा पैदा हुई। साथ ही उसने अपने मन में यह निश्चय कर लिया कि वह जिस सभ्यता से परिचय पा चुका है, उसे अपनी वामन जाति के भीतर प्रवेश करके उनका उद्धार करे।

जयसिंह अपने पिता से कहे बगैर घर से चला गया था, इस कारण उसकी आशाओं पर पानी फिर गया। वह बीमार हो गया। ऐसी हालत में अपने पुत्र को घर लौटे देख शेरसिंह फूला न समाया, और बोला-"बेटा, मेरे कहे मुताबिक तुम हमारी जाति का नेता बन जाओ।" यों समझाकर शेरसिंह ने नीचे गिरकर अपने प्राण त्याग दिये।

वामन लोगों ने अपने नेता शेरसिंह के आदेश का पालन करने के ख्याल से जयसिंह को अपने नये नेता के रूप में स्वीकार कर लिया।
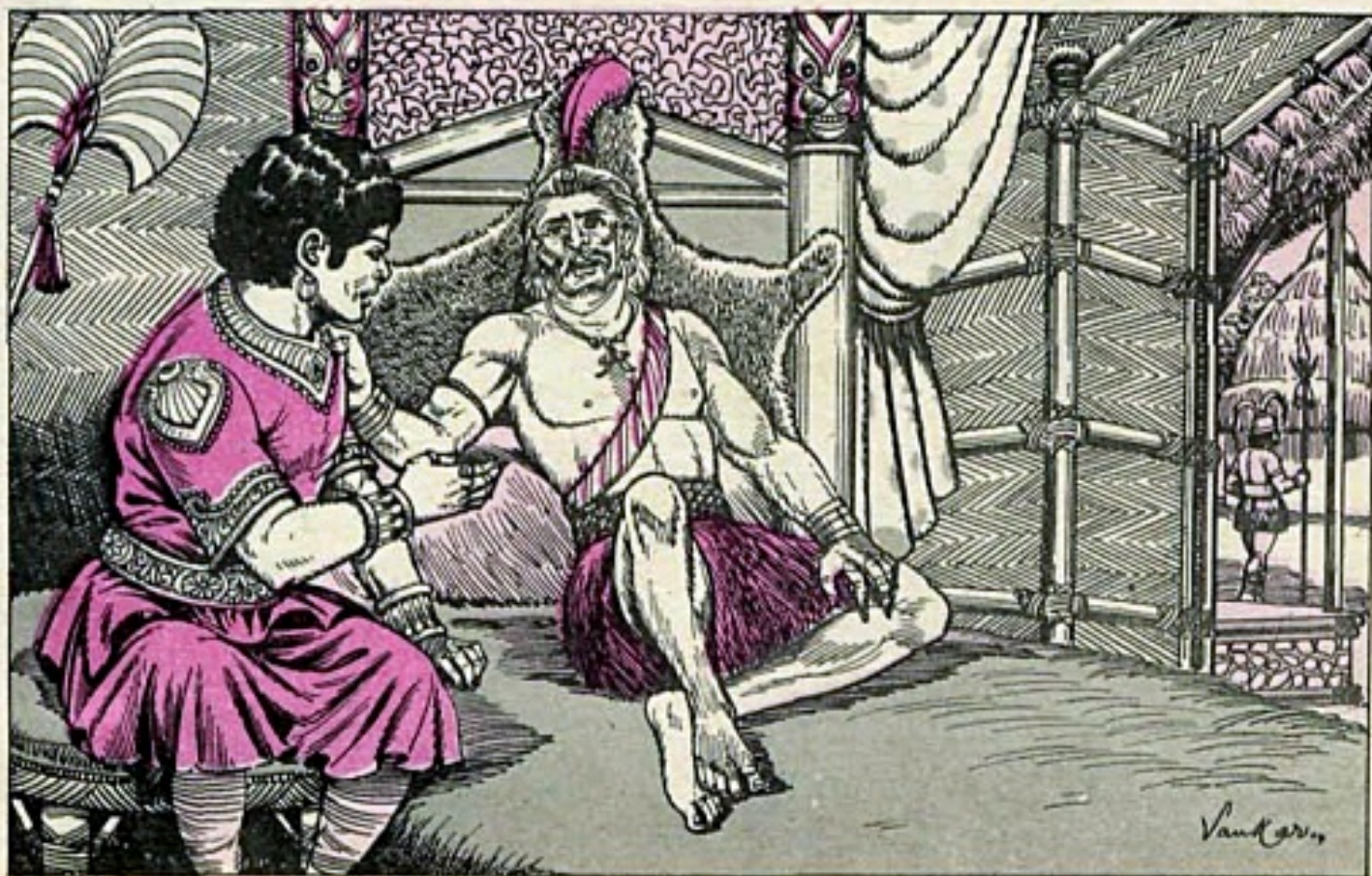
मगर जयसिंह ने सरदार का पदग्रहण करते ही अपने सारे जंगल को काटने का आदेश दे दिया। वामन जाति के लोगों को यह काम पागलपन-सा प्रतीत हुआ। फिर भी उन लोगों ने अपने सरदार के आदेश का पालन कर जंगल को काट डाला।

जंगली सरदार जयसिंह ने जंगल कटवाकर लकड़ी और दूसरी चीज़ों को भी विजयपुरी में भेजा। वहाँ पर उनकी बिक्री करवाकर उस धन से वामन जाति के लिए आधुनिक किस्म के घर और अन्य नागरिक सुविधाओं का इंतज़ाम कराया। इस वास्ते पुरानी बस्ती को ध्वस्त कराया। अब हिमालय के जंगल हिमपुरी के रूप में बदल गये। इसके बाद सरदार ने अपने अनुचरों को आदेश दिया कि वे विजयपुरी में जाकर सभ्य समाज के पेशों को अपनावे और इस तरह से धनार्जन करे। मगर वामन लोगों को वह सभ्यता जंची नहीं। इसके पहले वे जिन चीज़ों को काम में लाते थे, अब उनका अभाव हो गया। उन्हें हर चीज़ के लिए धन की आवश्यकता हुई।

उस हालत में वामनों को धीरजमल्ल नामक आदमी ने जंगली सरदार के विरुद्ध उकसाना शुरू किया। इसे देख जयसिंह डर गया और वामनों के लिए आवश्यक जंगली चीज़ें विजयपुरी के राजा की मदद से मँगवाकर हिमपुरी की दूकानों में बिकवाने का इंतज़ाम किया। लेकिन वे चीज़ें सभी लोगों के लिए पर्याप्त न थीं।

इस पर धीरजमल्ल ने जयसिंह के प्रति आक्षेप उठाया। तब जाकर जयसिंह ने एक अनोखा इंतज़ाम किया। जो चीज़ें कम मात्रा में मयस्सर होती थीं, उनको कम मात्रा में लोगों में बंटवाने की व्यवस्था की। इस तरह जो चीज़ें उपलब्ध होती थीं, वे किसी को भी काफी नहीं होती थीं।
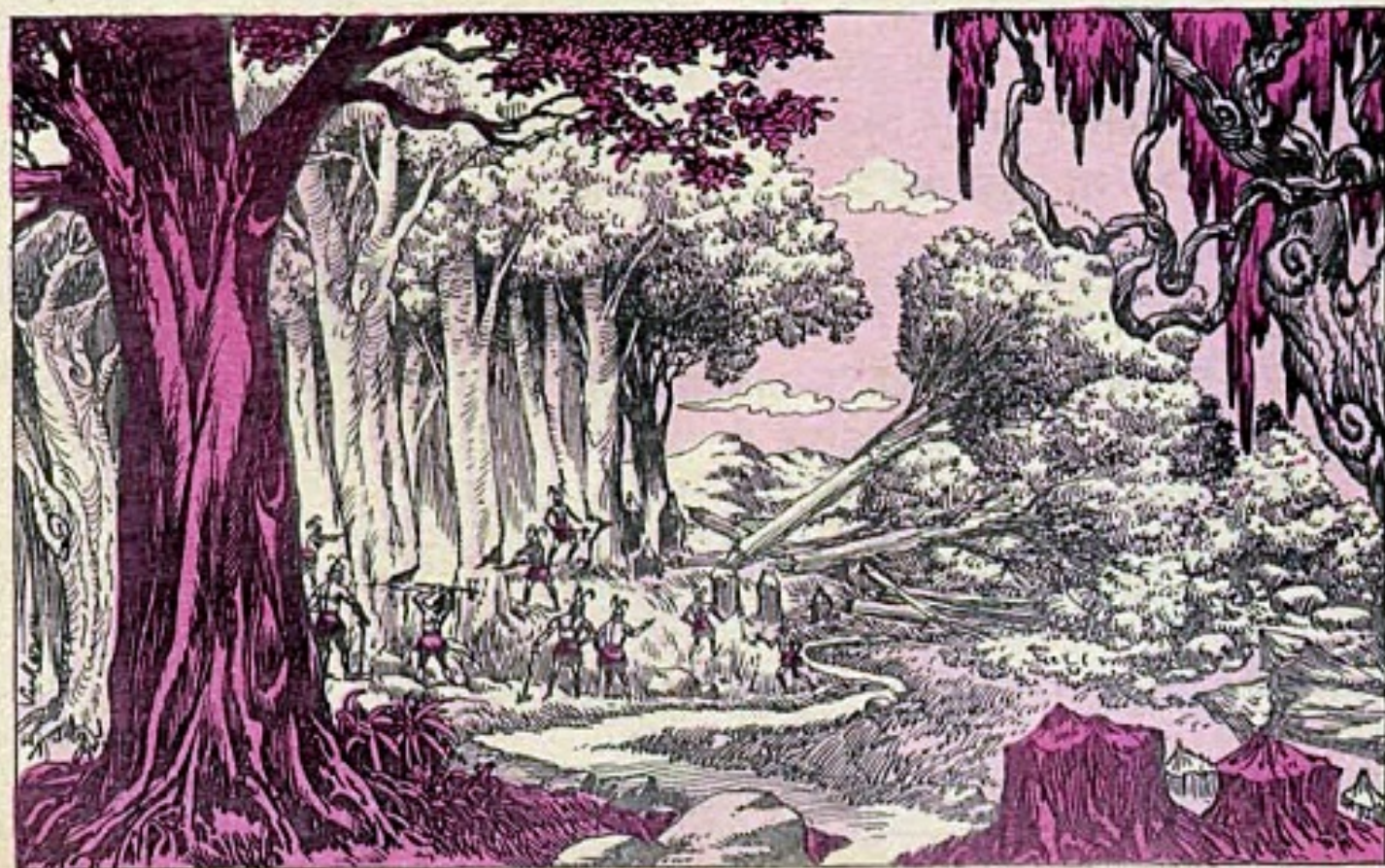
उन्हीं दिनों में धीरजमल्ल के मन में एक संदेह पैदा हुआ। वह यह कि सारे जंगल काट डाले गये हैं, ऐसी हालत में ये जंगली चीज़ें कहाँ से आ रही हैं? धीरजमल्ल ने इसकी तहक़ीकात क़राई तो उसे मालूम हुआ कि ये सारी चीज़ें महाराजा चंडसेन भिजवा रहे हैं, पर वे चीज़ें विजयपुरी में मिलती नहीं हैं, बल्कि विजयपुरी के समीप में स्थित मंदगिरि के जंगलों में मिलती हैं।

इस पर धीरजमल्ल ने सारे वामनों को मंदगिरि में जाने का आदेश दिया। तब सभी लोग धीरजमल्ल के नेतृत्व में मंदगिरि के जंगलों में चले गये और वहाँ पर अपना निवास बनाकर पहले की भांति आराम से अपने दिन बिताने का वामनों ने निश्चय कर लिया।

यह बात मालूम होने पर जयसिंह ने भी धीरजमल्ल के नेतृत्व में मंदगिरि के जंगलों में जाने की अपनी इच्छा प्रकट की। मगर वामनों ने अपनी बिरादरी से उसे बहिष्कृत किया और कहा—"तुम हमारे साथ रहने योग्य नहीं हो!" तब वे सब धीरजमल्ल के साथ मंदगिरि में चले गये।

बेताल ने यहाँ तक कहानी सुनाकर कहा—"राजन, जयसिंह ने वामन लोगों को इस तरह अनेक मुसीबतों में क्यों फंसा दिया? क्या वामनों की जीवन पद्धति के प्रति उसके मन में घृणा पैदा हो गई है? वामनों ने जंगली जीवन पद्धति को त्यागकर सभ्यता अपनाने से क्यों इनकार कर दिया? सभ्य जीवन जंगली जीवन से एक सीढ़ी ऊपर का ही होता है न? वामनों

को सभ्य बनाने का प्रयत्न करनेवाले जंगली नेता जयसिंह के प्रति उनके मन में कृतज्ञता की भावना न रही, उल्टे उन लोगों ने जयसिंह को अपनी बिरादरी से अलग क्यों किया? जंगली जाति में बिरादरी से हटाने से बढ़कर कोई बड़ी सजा नहीं है न? इन संदेहों का समाधान जानते हुए भी न देंगे तो आप का सिर फटकर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों उत्तर दिया–"जंगली सरदार जयसिंह ने नागरिक सभ्यता को उत्तम माना और उसे अपनी जाति के भीतर फैलाना चाहा। अलावा इसके अंत में वामनों ने धीरजमल्ल को अपना सरदार चुना, तब भी वह उनके साथ एक साधारण मनुष्य के रूप में जाने को तैयार हो गया। इससे स्पष्ट मालूम हो जाता है कि जंगली सरदार जयसिंह के दिल में अपनी जाति के प्रति कैसा अपार प्रेम है! अंत में वामनों के द्वारा उसे बिरादरी से बहिष्कार करना उनकी दृष्टि में बड़ी सजा हो सकती है, मगर जयसिंह के लिए वह कोई बड़ी सजा न थी। क्योंकि अपने संस्कार को लेकर वह कभी का अपनी जाति से अलग हो गया था। चाहे तो वह शहरी सभ्यता की ज़िंदगी जी सकता था। पर वामनों के द्वारा शहरी सभ्यता का तिरस्कार करने के पीछे पर्याप्त सबूत है। क्योंकि उनकी आवश्यकताएँ आचार-व्यवहार और विश्वास भी सभ्यता के अनुकूल न थे। जब तक जंगली जीवन उन्हें पूर्ण रूप से संतोष प्रदान करता, तब तक वे उसमें थोड़ा-सा भी परिवर्तन सहन नहीं कर पायेंगे। यह बात जाने बिना कि उसके भीतर जिस प्रकार के विचारों के परिवर्तन से उन्हें यह शहरी सभ्यता पसंद आ गई, उसने वामनों को मुसीबतों में डाल दिया।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)

दावत

रामसागर अव्वल दर्जे का कंजूस आदमी था। मगर उसका मजाक़ उड़ाने के ख़्याल से किसी ने यह अफ़वाह उड़ाई कि वह एक बड़ी दावत देने जा रहा है।

रंगदास नामक एक आदमी इसकी सचाई जानने की इच्छा से रामसागर के घर पहुँचा और उसके नौकर से पूछा–"सुनो भाई, क्या यह बात सच है कि तुम्हारे मालिक सारे गाँव के लोगों को दावत दे रहे हैं?"

नौकर ने जवाब दिया–"हमारे मालिक के द्वारा दावत देने की बात तो सच है, मगर अभी नहीं, प्रलय के दिन वे ज़रूर दावत देंगे।"

उसी वक्त घर से बाहर निकलनेवाले रामसागर ने ये बातें सुनीं और अपने नौकर पर खीझते हुए बोला–"अबे, दावत देने की तिथि का निर्णय करने में अभी जल्दी ही क्या है?"
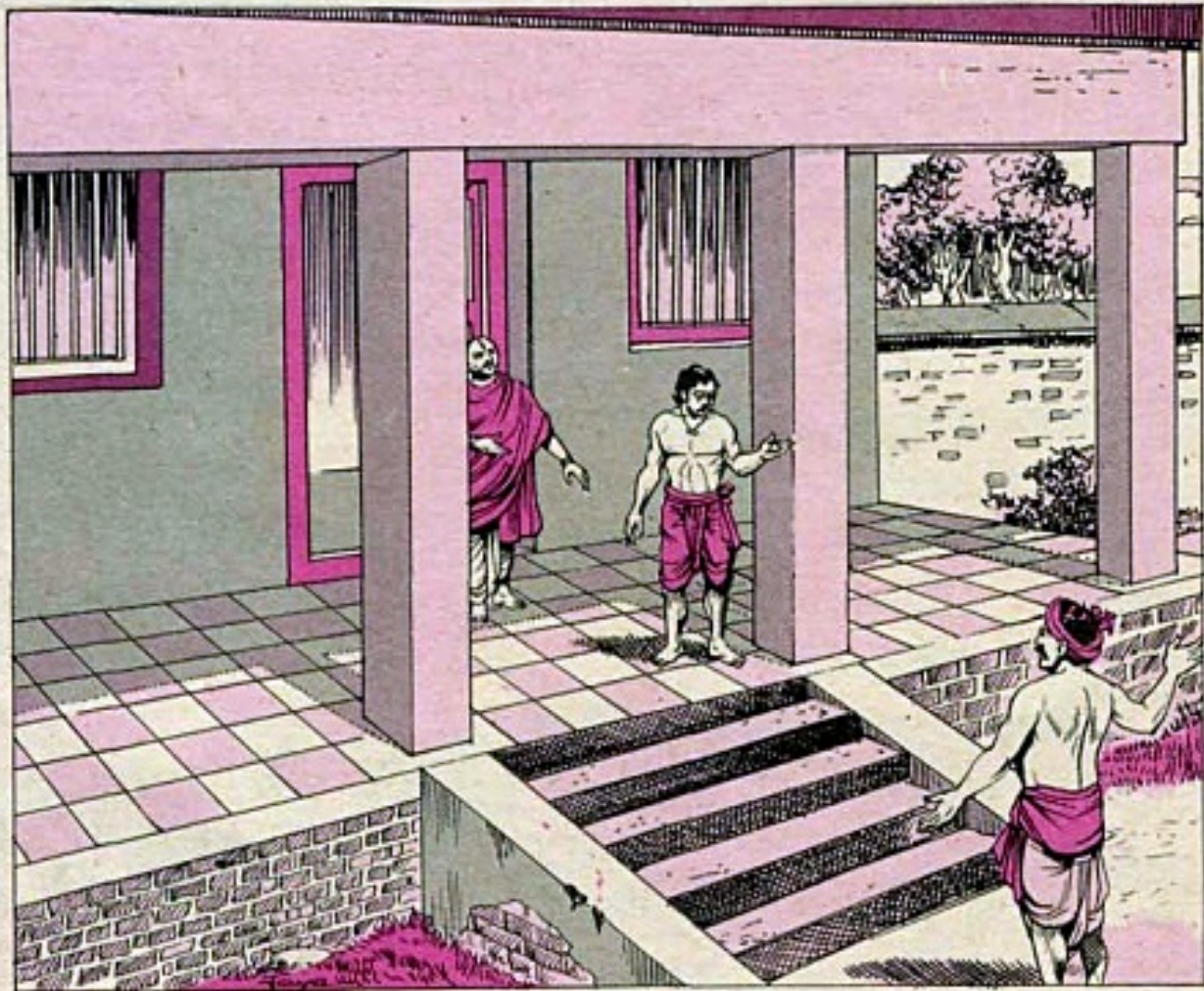
जादू का व्यापारी

इधर कुछ दिनों से जयरामगुप्त कोई बना-बनाया मकान सस्ते में मिल जाय तो खरीद लेना चाहता था, मगर उसकी इच्छा पूरी न हुई।

इस पर उसकी पत्नी खीझकर बोली– "तुम्हारी कंजूसी की वजह से मकान खरीदने की क़िस्मत हमें बदी नहीं है। कहीं थोड़ी-सी जमीन तो खरीद लो, झोंपड़ी ही सही, बनवा लेंगे।" मगर जयराम गुप्त ने यह भी नहीं किया।

उन्हीं दिनों में पड़ोसी गाँव में एक सुन्दर मकान बिक्री के लिए आया। मकान मालिक व्यापार करने के लिए दूसरे देशों में जाते हुए अपना घर बेचना चाहता था। आखिर वह जयरामगुप्त को सस्ते में ही वह मकान बेचकर घर की चाभी दे चला गया।

जयराम गुप्त कोई शुभ दिन देख पड़ोसी गाँव में पहुँचा तो देखता क्या है, चार आदमी मकान के दर्वाजे के पास लड़-झगड़ रहे हैं!

जयरामगुप्त को मालूम हुआ कि उन चारों ने पहले ही वह मकान खरीद लिया है और जयरामगुप्त पांचवाँ आदमी है।

इतने में उस मकान के आगे एक घोड़ा गाड़ी आ रुकी। उसमें से एक जमीन्दार उतर पड़ा, प्रधान फाटक के पास लड़नेवालों को देख उसने पूछा– "तुम लोग कौन हो? मेरे मकान के सामने तुम लोगों को काम ही क्या है?"

आखिर मालूम हुआ कि वह जमीन्दार किसी दूर के गाँव का निवासी है और उसने इस गाँव में यह नया मकान बनवा लिया है। उसने जो कागज़-पत्र दिखाये, उनसे यह बात सच्ची साबित हो गई। जयरामगुप्त ने उन लोगों को समझाया– "हम सब धोखा खा गये। चलो! हम

सरला गुप्त

यह मकान बेचनेवाले को पकड़ लेंगे। हमारे रुपये वापस करेगा, वरना उसकी चमड़ी उधेड़ देंगे। पर मकान बेचनेवाले का पता न चला। आखिर जयरामगुप्त अपने घर वापस लौट आया।

उस दिन शाम को जयरामगुप्त का साला मोतीलालगुप्त आ धमका। उसने पूछा—"बहनोई साहब! नये मकान में गृह-प्रवेश कब कर रहे हो?" जयरामगुप्त ने अपने साले को सारा किस्सा सुनाया।

मोतीलाल अपनी हँसी को रोकते हुए बोला—"बहनोईजी! तुमने जो रुपये मकान खरीदने के लिए दिये, उनसे उतनी खाली जमीन तक नहीं मिलती। ऐसी हालत में तुमने यह कैसे विश्वास किया कि ऐसा बड़ा महल मिल सकता है?"

जयरामगुप्त बोला—"तुम ठीक कहते हो! मैं लोभ में आ गया था। लेकिन मुझ जैसे चार व्यक्ति और जो हैं?"

दूसरे दिन सवेरे मोतीलाल अपने गाँव चला गया। पर शाम को जयराम को मकान बेचनेवाला व्यक्ति आ पहुँचा। उसे देखते ही जयराम उबल पड़ा—"तुम तो अव्वल दर्जे के दगेबाज हो! तुम्हें अपनी करनी का फल भोगना पड़ेगा।"

इस पर आगंतुक व्यक्ति ने हँसकर पूछा—"अगर मैं दगेबाज होता तो तुम्हें खोजते हुए यहाँ पर क्यों आ जाता? तुम्हारे रुपयों की क़ीमत की जमीन खरीद ली है। क्या लेने को तैयार हो?"

फिर क्या था, जयराम के दिल में फिर से आशा जगी। वह आगंतुक व्यक्ति मकान बनाने के लिए उस जमीन का दस्तावेज भी दे गया। जयरामगुप्त ने उस जमीन में घर बनाकर गृह-प्रवेश किया।

अपने बहनोई के द्वारा मकान बनवाने के लिए मोतीलालगुप्त ने जो नाटक रचा था, यह रहस्य जयरामगुप्त को बहुत समय तक मालूम भी नहीं हुआ। यह भी उसे पता न था कि उस महल को खरीदने का अभिनय करनेवाले चारों व्यक्ति उसके साले के दोस्त ही थे।
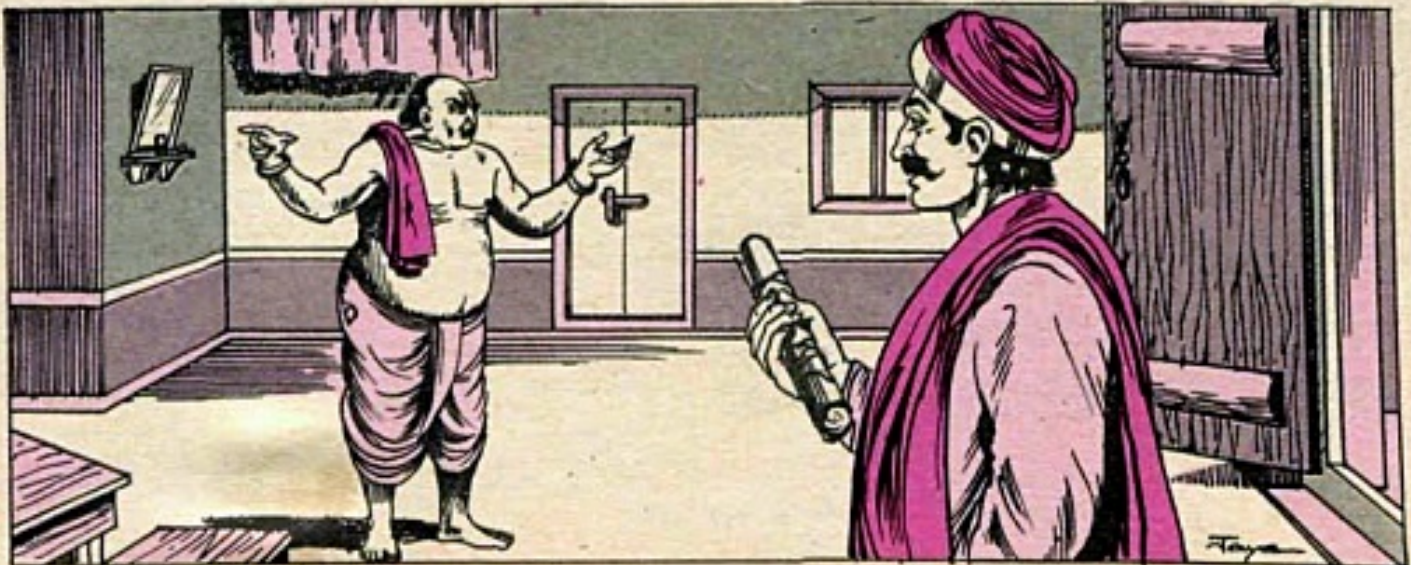
बिना दवा की बीमारी

कांचीपुर की रानी एक बार बीमार पड़ गई। बड़े बड़े वैद्य उसका इलाज़ न कर पाये! राजा ने यह घोषणा की कि जो वैद्य रानी को चंगा करेगा, उसे एक गाँव इनाम में दिया जाएगा! यह ख़बर मिलते ही यज्ञदत्त नामक एक वैद्य अपने शिष्य राहुल को साथ लेकर राजमहल में पहुँचा, रानी की जांच करके यह निर्णय किया कि रानी मानसिक बीमारी से पीड़ित है, इसलिए दवाइयों से उसका इलाज नहीं हो सकता!

यज्ञदत्त ने अपने निवास को लौटकर राहुल को असली बात बताई। राहुल ने सोचकर अपने गुरु से निवेदन किया कि उसे एक ज्योतिषी के रूप में रानी का परिचय करा दे। रानी के कोई संतान नहीं है, यही उसकी मानसिक बीमारी का कारण हो सकता है। राहुल ने रानी की हस्तरेखाओं की जांच करके बताया–"गुरुजी! महारानी के संतान योग की प्राप्ति है, पर भारी पैमाने पर यज्ञ करने होंगे।"

रानी खुशी के मारे खाट पर उठ बैठी और पूछा–"क्या सचमुच मेरे संतान होगी?"

"महारानीजी! आप के तो संतान होगी, मगर क्या फ़ायदा? संतान की वजह से आप पति-पत्नियों का वियोग होगा!" राहुल ने समझाया।

रानी का दिल बैठ गया। उसने पूछा–"तो फिर हमें क्या करना है?"

"यदि आप किसी को दत्त पुत्र बनायेंगी तो आप का संतान योग सफल होगा।" राहुल ने कहा। फिर क्या था, रानी की मानसिक व्याधि धीरे धीरे दूर हो गई। राजा ने उन गुरु-शिष्यों को एक गाँव दान कर दिया।

सास और बहू

केशव के पिता का देहांत उसके बचपन में ही हो गया। इसलिए उसकी माँ शांताबाई ने केशव को पाल-पोसकर बड़ा किया और सुशीला नामक एक सुंदर कन्या के साथ उसका विवाह किया।

थोड़े दिन तक सास और बहू के बीच परस्पर अनुराग था। लेकिन धीरे धीरे उनके बीच मन मुटाव बढ़ता गया। क्योंकि दोनों केशव पर अपना हक़ जताना चाहती थीं। वे दोनों एक दूसरे पर केशव से शिकायतें करने लगीं। उन दोनों के बीच समझौता कराने के लिए केशव ने कई प्रयत्न किये, लेकिन वह उसमें सफल न हुआ। आखिर केशव ने अपनी परेशानी का कारण अपने एक मित्र को बताया। उसने जो सलाह दी, केशव ने उसे अमल करना चाहा। एक दिन केशव ने अपनी पत्नी से कहा—"तुम कई दिनों से अपने मायके जाने की इच्छा प्रकट करती थी, मगर फ़ुरसत न मिलने की वजह से मैंने देरी की। तुम जल्दी तैयार हो जाओ, तुम्हारे मायके चले चलेंगे।"

अपने मायके जाने की बात सुशीला ने कई बार अपने पति से कही थी, पर केशव ही बराबर टालता गया था। अब उसने खुद यह निर्णय लिया था, इसलिए सुशीला की खुशी का कोई ठिकाना न रहा। अलावा इसके उसे रोज अपनी सास से लड़ना-झगड़ना पड़ता था। एक भी दिन ससुराल में सुखपूर्वक बिता न पाई थी। इसलिए उसने सोचा कि थोड़े दिन सास की झिड़कियों से दूर आनंदपूर्वक अपने मायके में बिता सकती है।

केशव सुशीला को लेकर ससुराल पहुँचा, सास ने दो-चार दिन ठहर जाने का केशव से अनुरोध किया, लेकिन वह काम का

सीताराम वर्मा

बहाना करके उसी दिन अपने घर चला आया।

इस प्रकार थोड़े दिन बीत गये। शांताबाई को लगा कि अपनी बहू के न रहने से सारा घर उजड़ा सा हो गया है। बहू तो बहुत सारे काम खुद किया करती थी। बहू के रहते सिवाय उस पर अधिकार चलाने के कभी उसने जमकर कोई काम-वाम नहीं किया था। आदत के छूट जाने से घर का सारा काम खुद संभालने के कारण वह थककर चूर हो जाती थी। इससे भी बढ़कर विचित्र बात यह थी कि वह बहुत कुछ सोचकर भी यह समझ न पाती थी कि आखिर वह अपनी बहू को किस वजह से डांटती थी, ये ही बातें सोचकर वह अपनी बहू को देखने लालायित रहने लगी।

आखिर एक दिन शांताबाई ने अपने बेटे से कहा—"बेटा, केशव! तुम अपने ससुराल जाकर बहू को क्यों बुला नहीं लाते? वह आखिर कितने दिन अपने मायके में रहेगी? उसे तो वहीं पर आराम मालूम होता है!" बहू पर शिकायत करने के स्वर में बोली।

ये बातें सुनकर केशव चुप रहा, मानो उसकी माँ की बातें उसने सुनी ही न हों!

उधर सुशीला के दिन मायके में आराम से कट गये। मगर उसने धीरे-धीरे भांप लिया कि उसके प्रति मायके में आदर का

भाव घटता जा रहा है। सुशीला की माता ने भी कुछ दिन उसके प्रति बड़ा प्रेम दिखाया, लेकिन कई दिन गुजर जाने पर भी ससुराल के न लौटते देख वह अपनी पुत्री के प्रति उपेक्षा का भाव दिखाने लगी। सुशीला के भाइयों में भी वह परिवर्तन साफ़ नज़र आने लगा।

इन सब से बढ़कर सुशीला के दिल को दुखानेवाली बात यह थी कि उसकी माँ अपनी बहू में क़दम-क़दम पर दोष ढूँढ़कर उसे सता रही है। पल भर भी उसे चैन से बैठने नहीं देती। वक़्त पर ठीक से खाना नहीं देती। सुशीला को पहले पता न था कि उसकी माँ ऐसा कठोर व्यवहार भी करती है। पर उसका भाई यह सब देखते हुए भाभी को सांत्वना देने के बदले उसी को डांट देता है। अपनी भाभी की यह हालत देखने के बाद सुशीला ने भांप लिया कि एक औरत को ससुराल में किस प्रकार निकृष्ट जीवन बिताना पड़ता है। अपने मायके का यह अनुभव हो जाने के बाद सुशीला अपने पति के घर जाने को मचलने लगी।

सुशीला ने जब अपनी सास की याद की तो उसे लगा कि उसके प्रति वह कैसा आदर दिखाया करती थी। पर सुशीला को इस बात का कोई कारण दिखाई न दिया कि उसे क्यों अपनी सास के साथ झगड़ा करना पड़ता था। अब उसका दिल लालायित हो उठा कि कब जाकर वह अपनी सास की गोद में सर रखकर शांति का अनुभव करे। फिर क्या था, वह अपने पति के आगमन का इंतज़ार तक किये बिना वही खुद अपने ससुराल को चली आई। अपनी बहू को देखते ही शांताबाई ने उससे गले लगकर यही कहा—"ओह बेटी! तुम कैसे दुबली-पतली हो गई हो?" अब शांताबाई को ऐसा लगा कि उसकी बहू मायके में काफी यातनाएँ झेलकर लौट आई हो! इसके बाद सास और बहू परस्पर माँ-बेटी से बढ़कर अधिक प्रेमपूर्ण व्यवहार करने लगीं।

विश्वामित्र

गाधि नामक राजा के सत्यवती नामक एक पुत्री थी । उसके कोई पुत्र न था । सत्यवती के साथ ऋचीक नामक तपस्वी ने विवाह किया । सत्यवती ने ऋचीक से निवेदन किया कि कोई ऐसा उपाय करे जिससे उसके साथ उसकी माँ के भी पुत्र-संतान हो!

ऋचीक ने समझाया–"तुम गूलर वृक्ष के साथ आलिंगन करो और तुम्हारी माता से पीपल का आलिंगन करने को कहो!" फिर उन्होंने सत्यवती और उसकी माता को अलग-अलग हव्य दे दिये । मगर उन दोनों ने एक दूसरे का हव्य बदलकर खाया । इस कारण क्षत्रिय स्वभाव को लेकर पैदा होनेवाला गाधी का पुत्र ब्राह्मण प्रकृति को लेकर उत्पन्न हुआ । वही विश्वामित्र है । विश्वामित्र क्षत्रिय के रूप में ही पले और बढ़े । कृशाश्व नामक गुरु के यहाँ अस्त्र-शस्त्रों की विद्या प्राप्त की, गाधि के अनंतर राजा भी बन बैठे ।

एक बार विश्वामित्र शिकार खेलने गये । थककर वसिष्ठ के आश्रम में पहुँचे । वसिष्ठ ने अपनी होम-गाय की मदद से विश्वामित्र और उनके परिवार को एक बढ़िया दावत दी ।

इससे प्रभावित होकर विश्वामित्र ने वसिष्ठ से पूछा–"मैं आप को एक लाख गायें दूंगा । आप मुझे वह होम धेनु दे दीजिए ।" पर वसिष्ठ ने नहीं माना ।

इस पर विश्वामित्र ने ज़बर्दस्ती होम धेनु को ले जाने की कोशिश की, लेकिन वसिष्ठ के तपोबल पर उस धेनु से असंख्य सैनिक पैदा हुए, उन सैनिकों ने विश्वामित्र के परिवार को भगा दिया ।

उस समय से विश्वामित्र के मन में वसिष्ठ के प्रति ईर्ष्या और द्वेष पैदा हुए ।

विश्वामित्र ने जान लिया कि वसिष्ठ की इस अद्भुत शक्ति का कारण तपस्या है। वे भी राज्य को त्यागकर तपस्या करने लगे। उनके आश्रम का नाम सिद्धाश्रम था।

विश्वामित्र की तपस्या भंग करने के लिए इंद्र ने मेनका को भेजा। विश्वामित्र मेनका के मोह के वशीभूत हो गये। तपस्या त्यागकर उन्होंने मेनका के द्वारा शकुंतला नामक एक कन्या को पैदा किया। इसके बाद विश्वामित्र को अपनी भूल मालूम हुई और फिर से उन्होंने तप करना प्रारंभ किया, पर उनका क्रोध बना रहा। उन दिनों में सत्यव्रत नामांतर त्रिशंकु नामक सूर्यवंशी राजा के मन में सशरीर स्वर्ग जाने की कामना पैदा हुई। इसको सफल बना सकनेवाला कोई यज्ञ प्रारंभ करने का वसिष्ठ से अनुरोध किया। वसिष्ठ ने साफ़ बता दिया कि यह कार्य संभव नहीं है। अपनी इच्छा की पूर्ति न होते देख त्रिशंकु ने वसिष्ठ और उनके पुत्रों की निंदा की। उन लोगों ने त्रिशंकु को शाप दिया कि वह चण्डाल बन जाये। इसके बाद त्रिशंकु ने विश्वामित्र से प्रार्थना की कि उसे देह सहित स्वर्ग में भिजवा देने की कृपा करें। विश्वामित्र ने तुरंत मान लिया। साथ ही एक यज्ञ करके अपनी सारी तपोशक्ति अर्पित कर त्रिशंकु को स्वर्ग भेजा। लेकिन इंद्र ने त्रिशंकु को स्वर्ग में प्रवेश करने नहीं दिया और उसे फिर पृथ्वी की ओर ढकेल दिया। पृथ्वी पर गिरनेवाले त्रिशंकु के वास्ते पृथ्वी और स्वर्ग के बीच विश्वामित्र ने एक और स्वर्ग की सृष्टि की, वही त्रिशंकु स्वर्ग कहलाया।

इसके बाद विश्वामित्र ने वसिष्ठ की भांति ब्रह्मर्षि कहलाने के ख्याल से घोर तपस्या की। उसे भंग करने के लिए इस बार इन्द्र ने रंभा को भेजा। एक बार इसके पहले विश्वामित्र का मेनका के द्वारा तपोभंग हो गया था, इस कारण रंभा के मोह में न पड़कर विश्वामित्र ने रंभा को शिला बन जाने का शाप दे दिया।

मृतसंजीवनी विद्या

प्राचीन काल में देव-दानवों के बीच भयंकर युद्ध हुआ करते थे। दोनों पक्षों के असंख्य लोग मृत्यु को प्राप्त होते थे। लेकिन दानवों के गुरु शुक्राचार्य मृतसंजीवनी विद्या के जानकार थे, इस कारण वे मृत राक्षसों को फिर से जिला देते थे। पर यह विद्या देवता जानते न थे।

देवताओं के गुरु बृहस्पति के कच नामक एक पुत्र था। वह बड़ा ही मेधावी था। शुक्राचार्य के यहाँ मृत संजीवनी विद्या सीखने के लिए देवताओं ने कच को भेजा।

अपने नये शिष्य कच की सेवा-शुश्रुसा को देख शुक्राचार्य फूले न समाये। उनकी पुत्री देवयानी ने कच के साथ घनिष्ठ प्यार किया।

कच के प्रति शुक्राचार्य तथा देवयानी का अपार अनुराग देख दानव ईर्ष्या से भर उठे। उन्हें संदेह भी हुआ कि कच मृतसंजीवनी विद्या सीखने के हेतु आया हुआ है, इस कारण उसका वध करने की योजना बनाई।

एक दिन चरागाह में कच अपने गुरु के मवेशी चरा रहा था, तब दानवों ने अचानक हमला करके उसे मार डाला। मगर यह बात जल्द ही देवयानी को मालूम हो गई।

अपने प्रियतम को फिर से जिलाने का देवयानी ने अपने पिता से अनुरोध किया। शुक्राचार्य ने इसे मान लिया और अपनी विद्या के बल पर कच को फिर से जीवित किया।

दानवों ने दुबारा कोई षड़यंत्र रचा। इस बार उन लोगों ने कच को जलाकर राख बनाया और उसे मद्य में मिला दिया।

इसके बाद दानवों ने वह मद्य अपने गुरु शुक्राचार्य को पीने के लिए दिया, जिससे कच फिर से जीवित होकर न लौटे। शुक्राचार्य यह बात नहीं जानते थे। उन्होंने वह मद्य पी लिया।

दानवों के चले जाने पर देवयानी दौड़कर आ पहुँची और दानवों के इस धोखे का अपने पिता को परिचय कराया। शुक्राचार्य ने समझ लिया कि उनकी मृत्यु के बिना कच जीवित होकर नहीं लौट सकता। क्योंकि अगर कच ज़िंदा भी हो जाय तो उनके पेट के भीतर ही रहेगा।

इस कारण शुक्राचार्य ने अपने पेट के भीतर स्थित कच को अपनी विद्या के द्वारा जिला दिया और उसे मृत संजीवनी मंत्र का उपदेश दिया। इस पर कच शुक्राचार्य का पेट चीरकर अपने सहज रूप में बाहर आ गया।

कच अब मृतसंजीवनी मंत्र जानता था, इसलिए उसकी मदद से उसने शुक्राचार्य को जीवित कर दिया। इस प्रकार कच ने अपनी वांछित विद्या प्राप्त कर ली।
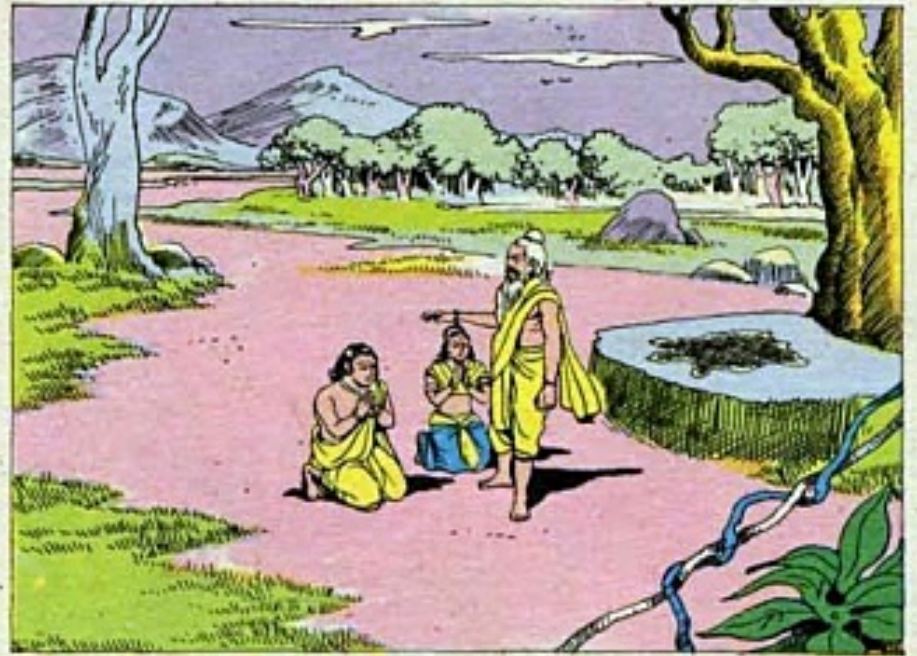
कच को अब देवताओं के पास लौटना था। देवयानी ने उसके साथ गाढ़ प्रेम करके विवाह करना चाहा। मगर गुरु की पुत्री अपनी बहन के समान होती है, इस कारण उनक विवाह नहीं हो सका।

अभिमन्यु

अभिमन्यु सुभद्रा और अर्जुन का पुत्र था।

पांडव जब शकुनि के साथ जुआ खेलकर हार करके वनवास को चले गये, तब उनके साथ केवल द्रौपदी ही वनवास को चली गई थी। कुंती हस्तिनापुर में ही रह गई थी। कृष्ण और बलराम अपनी बहन सुभद्रा और उसके पुत्र अभिमन्यु को अपने साथ द्वारका ले गये थे।

बलराम के शशिरेखा नामक पुत्री थी। उसने अभिमन्यु के साथ प्यार किया। अभिमन्यु ने भी शशिरेखा के साथ प्यार किया। पर बलराम शशिरेखा का विवाह दुर्योधन के पुत्र लक्ष्मण के साथ करना चाहते थे। विवाह की सारी तैयारियाँ भी हो चुकी थीं। जब वर-वधू विवाह वेदी पर बैठे थे, तब घटोत्कच (हिडिंबी नामक राक्षसी के गर्भ से भीम के द्वारा उत्पन्न पुत्र) शशिरेखा को उठा ले गया और अभिमन्यु के साथ उसका विवाह संपन्न किया।

बारह वर्ष वनवास करने के बाद पांडव मत्स्य देश के विराट नगर में वेश बदलकर अज्ञात वास में रहे, आखिर एक वर्ष बाद प्रकट हुए। यह समाचार मिलने पर सुभद्रा अभिमन्यु को साथ लेकर विराट नगर पहुँची और पांडवों से जा मिली।

अज्ञातवास के समय अर्जुन विराट राजा के पुत्र उत्तर के साथ बृहन्नला बनकर रहा करते थे। उनका कौरवों के साथ जब युद्ध हुआ, तब उस युद्ध में अर्जुन ने उत्तर का सारथी बनकर कौरव सेना को हरा दिया था। जब उन्हें मालूम हुआ कि बृहन्नला ही अर्जुन है, तब विराट राजा ने अर्जुन के साथ रिश्ता जोड़ना चाहा और अपनी पुत्री उत्तरा के साथ

विवाह करने के लिए विराट राजा ने अर्जुन के सामने प्रस्ताव रखा ।

इस पर अर्जुन ने उत्तरा का विवाह अपने पुत्र अभिमन्यु के साथ करने की माँग की । इस प्रकार उत्तरा और अभिमन्यु का विवाह विराट नगर में अत्यंत वैभव के साथ संपन्न हुआ ।

इस विवाह के थोड़े समय बाद कुरुक्षेत्र में कौरव और पांडवों के बीच भयंकर युद्ध हुआ । उसमें अभिमन्यु ने अपना असाधारण पराक्रम प्रदर्शित कर ऐसा युद्ध किया कि उनके सामने कौरव वीर टिक न पाये ।

एक दिन द्रोणाचार्य ने पद्मव्यूह की रचना करके उसमें कौरव सेना को खड़ा किया । पद्मव्यूह को भेदने का उपाय केवल अर्जुन और अभिमन्यु ही जानते थे । मगर उस दिन अर्जुन दूसरे रण क्षेत्र में संशप्तकों के साथ युद्ध में उलझे हुए थे । इस कारण कौरवों के उस पद्मव्यूह को भेदने की जिम्मेदारी अभिमन्यु पर आ पडी ।

अभिमन्यु ने पांडवों को बताया कि वह तो पद्मव्यूह में प्रवेश करने का उपाय भली भांति जानता है, मगर ज़रूरत पड़ने पर उससे बाहर निकलने का उपाय वह बिलकुल नहीं जानता । पर युधिष्ठिर ने उसे हिम्मत बंधाते हुए समझाया–"बेटा, तुम्हें डरने की कोई आवश्यकता नहीं है, हम सब पांडव लोग तुम्हारे पीछे पद्मव्यूह में प्रवेश करके ऐसा कोई उपाय करेंगे जिससे तुम शत्रुओं के बीच अकेले फँस न जावे ।"

परंतु ऐसा नहीं हुआ । अभिमन्यु के पीछे पद्मव्यूह में प्रवेश करनेवाले पांडवों को जयद्रथ ने रोका । अंत में अभिमन्यु कौरव सेना के बीच अकेला रह गया । मौक़ा पाकर द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, कर्ण, अश्वत्थामा, कृतवर्मा, दुर्योधन आदि महा वीरों ने उसे घेर लिया । उन सब के साथ अकेले ही भयंकर युद्ध करते हुए अभिमन्यु वीर की भांति मृत्यु को प्राप्त हुआ ।

सच्चा अपराधी

सवर्णों की बस्ती के समीप में हरिजनों की एक बस्ती थी। उस बस्ती का मुखिया कालूराम था। वह स्वभाव से सज्जन व साधू प्रकृति का था। पर उस गाँव के सवर्ण सनातन थे। वे हरिजनों की छाया से भी घृणा करते थे। सवर्णों के गाँव का मुखिया रामभट्ट नामक एक श्रोत्रिय ब्राह्मण था।

रामभट्ट के यदु नामक एक साला था। वह सभी व्यसनों का शिकार हो बिलकुल बिगड़ चुका था। वैसे वह शहर में रहा करता था, पर जब-तब रामभट्ट के घर आ जाता और थोड़े दिन वहीं बिता देता था। उन दिनों में वह हरिजन बस्ती में जाता और दारू पिया करता था। वक़्त बे वक़्त वह कालूराम से कर्ज भी लेने लगा था, जब कर्ज चुकाने की बात उठी, वह चुका न पाया। उल्टे एक अछूत आदमी मुझ जैसे सद् ब्राह्मण को उधार देकर फिर कर्ज चुकाने की माँग करने की हिम्मत करता है? यों विचार कर वह कालूराम पर बिगड़ उठा और उसे सताने का निश्चय भी कर लिया।

अंत में यदु ने कालूराम से कहा–"तुम अपना कर्ज माँगते हो न? एक काम करो। मेरी बहन ने कल शाम को थोड़े रुपये देने का वचन दिया है। मैं दो-तीन दिन थोड़ा व्यस्त रहूँगा। इसलिए इस ओर नहीं आ सकता। इसलिए कल शाम को तुम सब की आँख बचाकर मेरी बहन के घर के पिछवाड़े में मवेशीखाने के पास आ जाओ, मैं स्वयं आकर तुम्हें रुपये दे दूँगा। भगवान की क़सम खाकर कहता हूँ।"

दूसरे दिन संध्या के समय कालूराम पिछवाड़े में मवेशीखाने के पास आकर यदु का इंतज़ार करने लगा। उस वक़्त

श्री. ए. सी. सरकार, जादूगर

यदु दिया लेकर आया और जोर-शोर से चिल्लाने लगा–"कौन है वहाँ पर?" उसकी चिल्लाहट सुनकर घर भर के लोग पिछवाड़े की ओर दौड़ आये।

खतरे की आशंका से कालूराम वहाँ से भाग खड़ा हुआ। जब गाँववालों को पता चला कि कालूराम चोरी-चोरी रामभट्ट के पिछवाड़े में प्रवेश कर गया है, तब गाँव में खलबली मच गई। इसके बाद यह खबर फैल गई कि रामभट्ट की गाय जहर के प्रयोग से मर गई है, तब गाँव भर में सनसनी फैल गई।
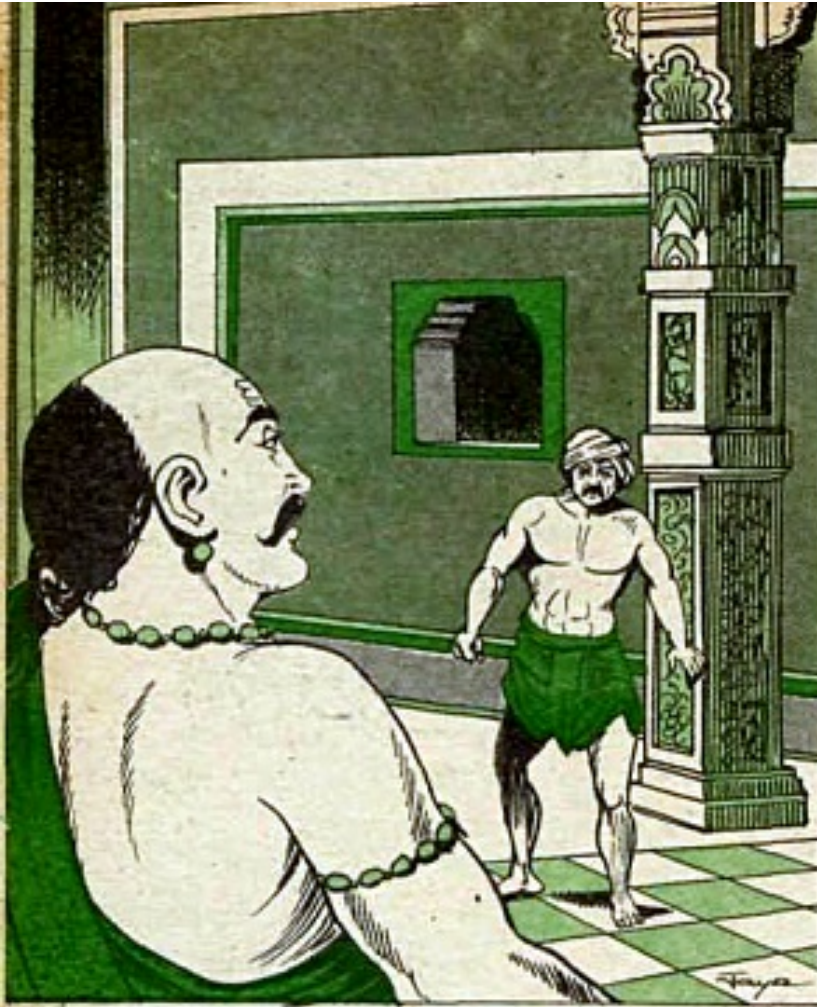
उस गाँव में महाकाली का मंदिर था। उसका पुजारी रुद्रदेव था। वह अत्यंत भलमानस था, पर उसके उदारतापूर्ण गुण गाँववालों को पसंद न थे। मगर रुद्रदेव को मंदिर के मालिक जमीन्दार बहुत मानता था। इस कारण गाँव के बुजुर्ग लोग रुद्रदेव का अहित सोच न पाते थे।

कालूराम को जब पता चला कि उस पर झूठा आरोप किया गया है, तब वह जंगल में भागकर छुप गया। यदु ने यह आरोप लगाया कि रामभट्ट की गाय को मारनेवाला व्यक्ति कालूराम ही है। इस पर गाँव के युवक कालूराम से बदला लेने के लिए हरिजन बस्ती की ओर दौड़ पड़े। यदि रुद्रदेव भी उनके साथ रहकर उन युवकों पर नियंत्रण न करता तो वे लोग हरिजन बस्ती के और लोगों से इसका बदला लेते। रुद्रदेव कालूराम को अच्छी तरह से जानता था। उसका विश्वास था कि कालूराम कभी ऐसी गलती करने की बात सोच भी नहीं सकता है।

उस दिन आधी रात के वक़्त कालूराम रुद्रदेव के घर पहुँचा। उसने अपने को बचाने व आश्रय देने की प्रार्थना की। तब वास्तविक समाचार उसे आदि से अंत तक कह सुनाया। रुद्रदेव को स्पष्ट मालूम हो गया कि इसका मूल कारण यदु ही है। उसने सोचा कि किस प्रकार उसकी पोल खोली जाय! अंत में रुद्रदेव

ने अपने जादू का प्रयोग करने का निश्चय कर लिया।

दूसरे दिन सवेरे रुद्रदेव गाँव के सभी बुजुर्गों को मंदिर के अहाते में स्थित अपने घर बुला भेजा और समझाया—"रात को देवी ने मुझे सपने में दर्शन देकर अपराधी का पता लगाने के लिए अंगूठियों की एक परीक्षा लेने की बात बताई है। हम लोग शाम को मंदिर में वह परीक्षा करके देखेंगे। कृपया आप सब लोग उस समय ज़रूर पधारियेगा।"

संध्या के समय सभी लोग मंदिर के सामने खाली मैदान में आ पहुँचे। रुद्रदेव ने थोड़ी देर तक ध्यान करके मंदिर की घंटी बजानेवाली छोटी-सी लकड़ी निकाली, वहाँ पर इकट्ठे हुए लोगों से लाल व नीलमणि जड़ी अंगूठियाँ माँगकर ले लीं, तब समझाया—"हम यह मान लेंगे कि यह नील मणि की अंगूठी कालूराम को सूचित करती है। अगर वह अपराधी नहीं है तो कोई दूसरा होगा। उसको यह लाल मणि की अंगूठी सूचित करती है। अब हम यह देख लेते हैं कि इस वक़्त महाकाली इन अंगूठियों पर अपना प्रभाव दिखाकर कालूराम को अपराधी ठहराती हैं या किसी दूसरे को।" यों कहते लकड़ी को बायें हाथ से पकड़कर पहले नील मणि की अंगूठी को लकड़ी पर

से खिसका दिया। कालूराम की प्रतिनिधि बनी वह अंगूठी लकड़ी के नीचे खिसक गई। इस पर रुद्रदेव ने उसे ऊपर निकालकर उस पर लाल मणिवाली अंगूठी को लकड़ी पर से खिसका दिया। मगर वह लकड़ी के नीचे खिसक न गई, बल्कि बीच में ही रुककर ऊपर-नीचे हिलने लगी। इस पर एक ने कहा—"अपराधी कालूराम नहीं, बल्कि कोई दूसरा है।"

"जी हाँ! महाकाली यही बात बता रही है। मगर वह अपराधी कौन होगा? 'यह बात महाकाली बता नहीं रही हैं।" रुद्रदेव ने कहा। इस तरह रुद्रदेव ने कालूराम को बचाया। क्योंकि गाँव के

अधिकांश लोगों में यह विश्वास जम गया कि कालूराम ने गोहत्या नहीं की है ।

मगर यह काम यदु ने ही किया है । इस बात पर यक़ीन करने के लिए ज्यादा समय नहीं लगा । दूसरे दिन ही पुलिस के सिपाही यदु की खोज में आ पहुँचे । उसने शहर में जो अपराध किये थे, वे सब खुल गये थे । उन अपराधों के साबित होते ही सिपाहियों ने यदु का पता लगाया और उसे बन्दी बनाकर ले गये ।

ये सारी घटनाएँ जब घटीं, तब जमींदार गाँव में न था । उसने लौटकर जब ये सारी बातें सुनीं, तब वह इस बात पर पछताने लगा कि उसने हरिजनों के वास्ते और अधिक प्रबंध नहीं किये हैं । तब उसने यह इंतज़ाम किया कि गाँव की सारी सुविधाएँ सवर्णों के साथ हरिजनों को समान रूप से प्राप्त होंगी और मंदिर में प्रवेश करने का अधिकार उन्हें भी होगा ।

इसके बाद जमीन्दार ने हँसते हुए रुद्रदेव से पूछा—"तुमने कालूराम को बचाकर उत्तम कार्य ही किया है, पर उसमें महाकाली को कैसे भेज पाये?"

"जमीन्दार साहब! मैंने एक युक्ति की है । सच्ची बात यह है कि मैंने उस वक़्त एक काला कुर्ता पहन लिया । लकड़ी पर पतला व काला धागा चिपका दिया । धागे का दूसरा छोर मेरे कुर्ते की घुंडी से बांध दिया । उस धागे को कोई देख नहीं सकता था । जब नील मणिवाली अंगूठी को लकड़ी के ऊपरी भाग से सरका दिया, तब मैंने उस लकड़ी को कुर्ते के समीप रखकर पकड़ लिया । वह अगूठी लकड़ी के साथ नीचे उतरकर मेरे हाथ पर गिर पड़ी । पर जब मैंने लाल मणिवाली अंगूठी सरका दी, तब मैंने लकड़ी को थोड़ा अलग रखकर पकड़ लिया, जिससे अंगूठी लकड़ी के नीचे खिसकने से धागे ने रोक लिया । इसके बाद मैंने लकड़ी को थोड़ा आगे-पीछे हिला दिया तो अंगूठी ऊपर-नीचे की ओर हिलने लगी । बस, यही असली रहस्य है ।"

दरबारी शिल्पी

चन्द्रगिरि के शासक विजयपाल बड़े ही कला-प्रेमी थे। उन्होंने अपने दरबार में कई कवि, शिल्पी, चित्रकार और गायकों को ही आश्रय नहीं दिया, बल्कि दूसरे देशों के उत्तम कलाकारों को प्रोत्साहन देने के ख्याल से हर साल वे कला की प्रतियोगिताएँ भी चलाते थे। उन प्रतियोगिताओं में साधारणतः चन्द्रगिरि के दरबारी कलाकार ही विजयी हुआ करते थे। यदि कभी भूल से अन्य देशों के कलाकार विजयी हो जाते तो उन्हें किसी न किसी प्रकार अपने दरबार में बुलवाया करते थे।

अन्य कलाओं की बात चाहे कुछ भी रही हो, मगर शिल्प में चन्द्रगिरि के कलाकारों को दूसरे देशों के कलाकार पराजित नहीं कर पाये। इसका प्रधान कारण सुचित्र नामक एक अद्भुत शिल्पी था। उसकी शिल्पकला की समता कर सकनेवाला सौ कोस की दूरी में कोई दूसरा न था। राजा विजयपाल सुचित्र के प्रति अत्यंत आदर का भाव रखते थे। क्योंकि सुचित्र ने शिल्पकला में न केवल चन्द्रगिरि का नाम ऊँचा रखा, बल्कि उसने अन्य राजाओं के निमंत्रण को भी अस्वीकार किया था।

ऐसे यशस्वी कलाकार सुचित्र का एक बार अचानक देहांत हो गया। राजा ने सुचित्र के पुत्र वैशाख को अपने दरबारी शिल्पी नियुक्त किया। वह शिला को शिल्प में बदलने की सभी दशाओं को जानता था। मगर वह उस कला में केवल एक-दो सीढ़ियाँ ही पारकर पाया था। सुचित्र ने वैशाख को अपने ही बराबर के शिल्पी बनाने की बड़ी कोशिश की, लेकिन उसका प्रयत्न सफल नहीं हुआ।

दिनेश पांडे

फिर भी उस वर्ष चन्द्रगिरि की शिल्प-प्रतियोगिता में वैशाख के शिल्प को प्रथम स्थान प्राप्त हुआ। प्रतियोगिता के देश-विदेशों के शिल्प-प्रवीणों ने एक मत से यह निर्णय किया कि वैशाख शिल्पकला में किसी बात में अपने पिता से कम नहीं है। फिर क्या था, राजा विजयपाल के आनंद की कोई सीमा न थी।

उस दिन से वैशाख के द्वारा निर्मित सभी शिल्पों में उत्तम कला के प्रमाण दृष्टिगोचर होने लगे। मगर वास्तविक बात यह थी कि वे शिल्प वैशाख के द्वारा गढ़े नहीं गये थे। उन्हें गढ़नेवाला शिल्पी श्रीमुख नामक एक युवक था।

श्रीमुख ने सुचित्र के यहाँ शिल्पकला का अभ्यास करते हुए एक-दो साल के भीतर सुचित्र के समान सामर्थ्य प्राप्त की। एक बार सुचित्र को अनेक शिल्प तैयार करने पड़े, तब उनमें से कुछ शिल्प श्रीमुख ने पूरा किये। मगर उन शिल्पों में कोई अंतर दिखाई नहीं दिया। सुचित्र ने मरते वक़्त श्रीमुख से कहा–"बेटा, तुम अपने पैरों पर आप खड़े हो महा शिल्पी के रूप में मान्यता पाने तक मेरे पुत्र की मदद किया करो।"

अपने गुरु का आदेश पाकर श्रीमुख अपने को वैशाख का शिष्य बताता गया। साथ ही वैशाख को जो शिल्प तैयार करने होते थे, वे सारे शिल्प वही खुद तैयार करता गया। वह अपने यश, उपाधि और पुरस्कारों के प्रति बिलकुल ध्यान न देता था। उत्तम शिल्प तैयार करने में ही उसे तृप्ति मिलती थी। राजा विजयपाल के मल्लिका नामक एक पुत्री थी। वह अपूर्व सुंदरी थी। वह विवाह के योग्य हो गई थी। असाधारण सौंदर्य रखने वाली राजकुमारी को कोई ख़तरा हो सकता है। इस विचार से राजा विजयपाल उसे राजमहल से बाहर जाने नहीं देते थे।

अचानक राजा विजयपाल के मन में एक विचार आया। थोड़े दिनों में

मल्लिका विवाह करके अपने पति के घर चली जाएगी। बुढ़ापा उसे घेर लेगा। आज उसका जो अद्भुत सौंदर्य है, वह वास्तव में अशाश्वत है। उसे शाश्वत बनाने का एक मात्र उपाय शिल्प में उस स्वरूप को प्रतिष्ठापित करना ही है। इसके योग्य दरबारी शिल्पी वैशाख के अतिरिक्त और कौन हो सकते हैं?

विजयपाल के मन में एक और विचार भी उत्पन्न हुआ, वह यह कि मल्लिका के साथ विवाह करने की इच्छा प्रकट करते आगे आनेवाले राजकुमारों के समक्ष मल्लिका के स्थान पर उसकी प्रतिमा को प्रदर्शित किया जा सकता है! क्योंकि विजयपाल का विश्वास था कि मल्लिका को प्रत्यक्ष देखनेवालों के मन में चित्त विभ्रम पैदा हो सकता है।

इस विचार के पैदा होते ही विजयपाल ने दरबारी वृद्ध चित्रकार के द्वारा मल्लिका के दो-तीन चित्र बनवाये। उनकी मदद से राजमहल के कला मंदिर में मल्लिका की प्रतिमा गढ़ने का कार्य वैशाख को सौंप दिया। साथ ही यह आदेश जारी किया कि प्रतिमा के तैयार होने तक शिल्पी के अतिरिक्त कोई उसके भीतर प्रवेश न करे।

शिल्प-निर्माण के लिए चन्द्रशिला का चुनाव करके उसे उचित स्थान पर रखा गया। वैशाख कला मंदिर में पहुँचा, पर प्रतिमा गढ़नेवाला व्यक्ति श्रीमुख था। इस कारण श्रीमुख वैशाख के सहायक के रूप में छेनी, हथौड़ी लेकर आ पहुँचा।

प्रतिमा निर्मित होने लगी। मल्लिका के कानों में यह भनक पड़ गई कि उसके पिता उसकी प्रतिमा बनवा रहे हैं। एक दिन वह जिज्ञासावश प्रतिमा को देखने कला मंदिर की ओर चल पड़ी। शिला के सामने छेनी, हथौड़ी हाथ में ले श्रीमुख खड़ा था। बाजू में शिला से टिकाये गये मल्लिका के चित्र को देख रहा था। वैशाख थोड़ी दूर पर बैठे आराम कर रहा था।

श्रीमुख ने पीछे मुड़कर देखा। मल्लिका का सौंदर्य देख वह विमूढ़-सा हो गया। अप्रयत्न ही उसके मुंह से ये शब्द निकल पड़े–"अद्भुत है! यह कैसा सौंदर्य है! इस सौंदर्य के लिए भले ही शिला न्याय कर सके, पर चित्रकार की कूँची कहाँ न्याय कर सकती है? माते, आप मेरे सामने ऐसे ही खड़ी हो जाइये! मैं आप के सौंदर्य को इस शिला में ज्यों के त्यों उतार देता हूँ।"

मल्लिका क्रोध से भर उठी। वह शीघ्रगति से अपने पिता के पास पहुँची और शिकायत की–"पिताजी! आप क्या मेरी प्रतिमा किसी अयोग्य शिल्पी के द्वारा गढ़वा रहे हैं? उसने मुझे नख-शिख पर्यंत देखा। मेरे सौंदर्य की प्रशंसा करते पागल की तरह बकता गया। वह कहता है कि मेरी मूर्ति गढ़ने के लिए उसके सामने मुझे खड़ा होना है!"

मल्लिका के आगमन को उन दोनों ने नहीं देखा। मल्लिका के चित्र को परखते श्रीमुख ने अपनी शंका प्रकट की–"गुरुजी, यह झूठी प्रतिमा महाराज क्यों गढ़वा रहे हैं? क्या कोई ऐसी सुंदरी भी हो सकती हैं? इससे भी ज्यादा सुंदर नारी की कल्पना करके प्रतिमा गढ़ने का आदेश देते तो हमारा काम और अधिक सरल होता!

शिल्प में अभी तक ठीक से रूपरेखाएँ बनी न थीं। उसे गढ़नेवाला श्रीमुख मल्लिका की दृष्टि में अनुभवहीन शिल्पी जैसा लगा। इस पर मल्लिका नाराज हो गई। उसने पूछा–"क्या तुम ठीक से छेनी पकड़ना भी जानते हो?"

राजा विजयपाल को ये बातें अपमान जनक प्रतीत हुईं। उन्होंने यह जान लिया कि मल्लिका से बात करनेवाला व्यक्ति अपने दरबारी शिल्पी का शिष्य है। दुनियादारी का अनुभव न रखनेवाला किशोर है। इस कारण उसे कठोर दण्ड दिये बिना देश निकाला सजा मात्र सुनाई। वैशाख ने राजा से प्रार्थना की कि उसकी मदद के बिना वह राजकुमारी की प्रतिमा

गढ़ नहीं सकेगा, पर फ़ायदा न रहा। इसके बाद श्रीमुख ने जो कुछ शिल्प गढ़ा था, वहीं तक रह गया। कई दिनों के बाद राजा विजयपाल ने वैशाख को बुलवाकर कारण पूछा। इस पर वैशाख ने सच्ची बात बताई–"महाराज! मैं असमर्थ व्यक्ति हूँ। जो कलाकार शिल्प गढ़ सकता था, उसे आप ने भेज दिया। मेरे नाम से जो प्रतिमाएँ विख्यात हो गयीं, वे सब उसी के द्वारा गढ़ी गई थीं।"

विजयपाल यह निर्णय न कर पाये कि वैशाख का कथन झूठ है या इसके पूर्व एक शिल्पी के रूप में अभिनय करने की घटना झूठ है, आखिर उन्होंने वैशाख को कारागार में बन्दी बनाया।

इस प्रकार एक वर्ष बीत गया। फिर से कला की प्रतियोगिताएँ हुईं। इस बार दरबारी शिल्पी ने उस प्रतियोगिता में भाग न लिया। पड़ोसी देश से किसी कलाकार के द्वारा भेजे गये शिल्प को न्याय निर्णताओं ने एक मत से प्रथम पुरस्कार की घोषणा की। वह मल्लिका की प्रतिमा थी, इस बात को राजा तथा दो-चार और व्यक्तियों ने ही समझ लिया।

उस प्रतिमा को देख राजा विजयपाल चकित रह गये। जिस प्रतिमा को उनका दरबारी शिल्पी गढ़ न पाया, उसे किसी पड़ोसी देश के शिल्पी ने सजीव रूप दिया है। ऐसे कलाकार को उनके दरबारी शिल्पी के पद पर नियुक्त करना है।

निमंत्रण पाकर महा शिल्पी दरबार में आ पहुँचा। वह कोई और न था, श्रीमुख ही था। उसने मल्लिका को केवल एक ही बार देखा था। मगर उसकी देह की प्रत्येक अणु को प्रतिमा के भीतर वह प्रतिबिंबित करा पाया है।

इसके बाद राजा विजयपाल ने श्रीमुख से क्षमा माँगी। उसे अपने दरबारी शिल्पी के पद पर नियुक्त किया। पर श्रीमुख ने इस शर्त पर उस पद को ग्रहण करने को मान लिया कि वैशाख को कारागार से मुक्त करके राजा उसका अभिनंदन करे।

सच्चा ज्योतिषी

कनकदास की पुत्री कमला कुरूपिनी थी। वह विवाह के योग्य हो चुकी थी। इस कारण कनकदास चिंतित था। उसकी यह चिंता देख उसके मित्र रंगदास ने समझाया–"दोस्त! तुम परेशान क्यों होते हो? वक़्त आ जाये तो तुम्हारी पुत्री की शादी के होने में देरी ही क्या लगती है? तुम उसे रोकना भी चाहे, रोक नहीं सकते।"

"वह वक़्त कब आनेवाला है? मैं आज तक उसी का ही तो इंतज़ार कर रहा हूँ?" कनकदास ने पूछा।

"यह बात मैं कैसे बता सकता हूँ? किसी अच्छे ज्योतिषी से क्यों न पूछ लेते?" रंगदास ने सलाह दी।

"सुनो भाई! तुम्हारी जानकारी में कोई ज्योतिषी हो तो बतला दो न? मैं अपनी कन्या की जन्मकुंडली उसे दिखा देता हूँ।" कनकदास गिड़गिड़ाने लगा।

कनकदास के काम आनेवाला ज्योतिषी तो रंगदास के रिश्तेदारों में ही एक था। वह तो एक जवान था। उसका नाम मुरली था। ज्योतिष जानने का उसे बड़ा शौक था। उसने अनेक ज्योतिष शास्त्र के ग्रंथ पढ़ डाले थे। अपने ज्योतिष ज्ञान की जांच करने की वह जिज्ञासा रखता था।

उस युवक ने एक बार रंगदास की जन्मकुंडली माँगकर ले ली और बताया था–"आज से ठीक दो मास के भीतर तुम्हें धन की प्राप्ति होगी।"

उन दिनों में रंगदास थोड़ी मुसीबत में फँसा हुआ था। इसलिए उसने उत्साह में आकर पूछा था–"देखो भाई, अच्छे ढंग से जन्मकुंडली की जांच करके बताओ! क्या तुम सचमुच ज्योतिष जानते हो?"

"मेरा ज्योतिष कभी झूठा नहीं हो सकता।" मुरली ने जवाब दिया था।

रामनारायण अग्रवाल

इससे मुरली चुप न रहा, वह रोज रंगदास से मिलता और इस बात का पता लगाता था कि उसे धन की प्राप्ति हुई या नहीं?

इस प्रकार दो महीने बीत गये, लेकिन रंगदास को कहीं से धन हाथ न लगा। एक दिन मुरली से रंगदास ने कहा–"अबे, तेरा यह कैसा ज्योतिष है? मुझे तो एक कौड़ी का भी लाभ नहीं हुआ है।"

"ऐसा मत कहिए काकाजी! आज से ही तो दो महीने पूरे हो रहे हैं। मैं तो दिन गिन रहा हूँ। चाहे कुछ भी हो जाय, मगर मेरा ज्योतिष कभी झूठा साबित नहीं हो सकता। आज ही मैं आप को दो सौ रुपये दे रहा हूँ।" मुरली ने कहा।

रंगदास ने बिना संकोच के मुरली के हाथ से दो सौ रुपये लेकर कहा–"बेटा, ज्योतिषी हो तो तुम्हारे ही जैसे हो! बेचारा कनकदास ज्योतिषी की खोज कर रहा है। तुम उससे जाकर क्यों न मिल लेते?"

मुरली ने सोचा कि उसके ज्योतिषज्ञान का प्रदर्शन करने के लिए एक और अच्छा मौक़ा हाथ लगा है, वह उत्साह में आ गया और सीधे कनकदास के घर पहुँचा। कनकदास ने मुरली को अपनी पुत्री की जन्मकुंडली दिखाकर पूछा–"महाशय यह बताओ कि इस कन्या की शादी कब होगी?"

"जन्मकुंडली के मुताबिक़ तो एक महीने के अन्दर हो जानी चाहिए।" यों
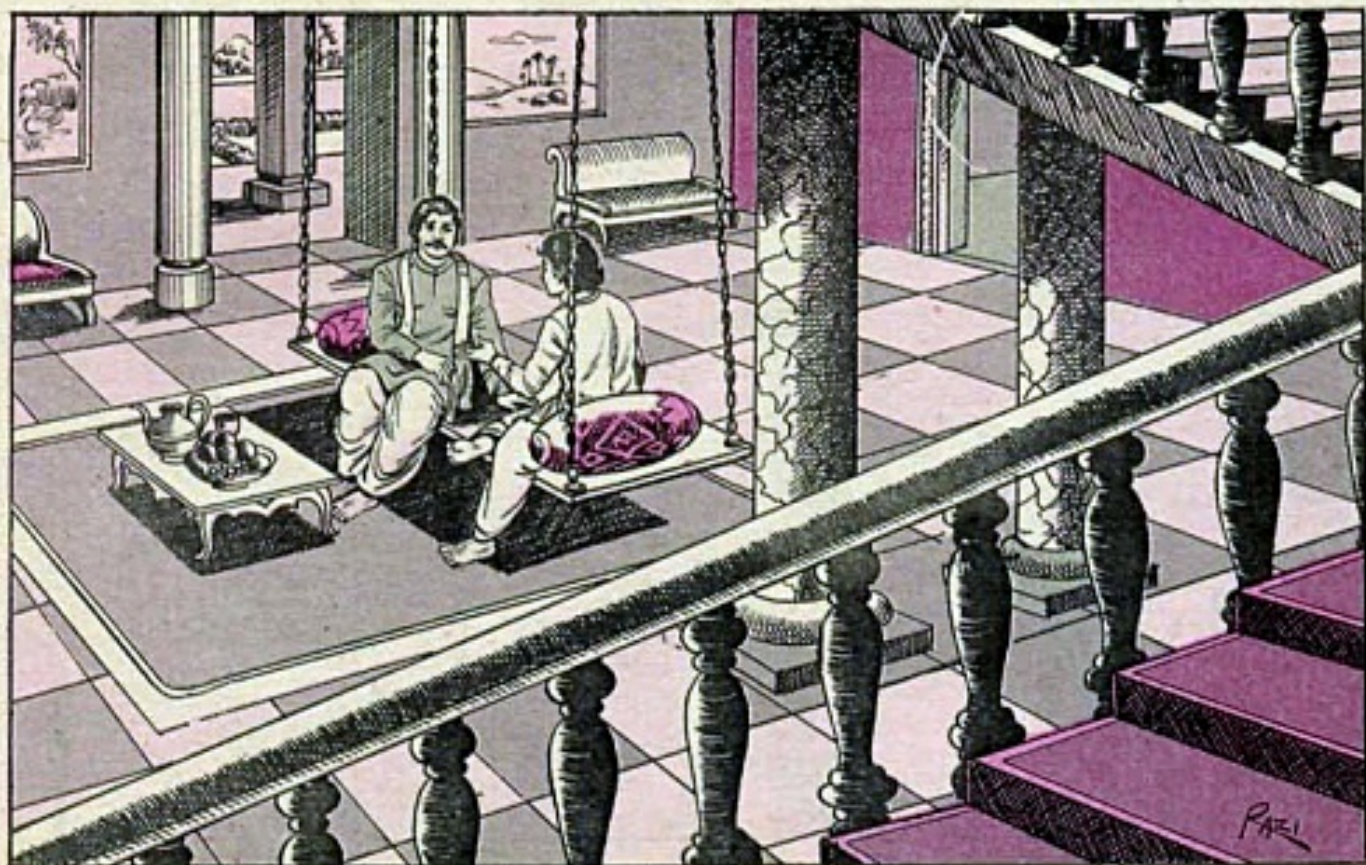
समझाकर मुरली ने मुहूर्त भी निश्चित कर लिया।

इसके बाद कनकदास ने मुरली को अपनी कन्या दिखाई और पूछा—"सुनो महाशय! मैं तीन साल से रिश्ते ढूँढ़ रहा हूँ। तुम कहते हो कि एक महीने के अंदर हो जाएगी। क्या यह सचमुच होने की है?"

कमला को देखने पर मुरली भौंचक्का रह गया। उसने फिर कहा—"मेरा ज्योतिष कभी झूठा नहीं हो सकता।" यों समझाकर वह कनकदास से विदा ले चला गया। उस दिन से वह खुद कमला की शादी के रिश्ते ढूँढ़ने लगा। उसने जो मुहूर्त निश्चित किया, वह समीप आ रहा था। पर कमला का रिश्ता तै न हो पाया।

अंत में मुरली ने कनकदास के पास जाकर कहा—"मेरा ज्योतिष कभी झूठा नहीं हो सकता। इसलिए कमला के साथ शादी मैं ही कर लूँगा।"

फिर क्या था, कमला और मुरली का विवाह वैभव पूर्वक संपन्न हुआ। इसके दस दिन बाद रंगदास ने मुरली से मिलकर कहा—"मैं पहले ही जानता था कि यही होगा। कनकदास के पास धन-संपत्ति की कमी नहीं है। तुम तो ज्योतिष के पीछे पागल हो और किसी के दिल को दुखाना नहीं चाहते। तुम जैसे सरल व्यक्ति के लिए कनकदास जैसा धनी ससुर मिल जाय तो अच्छा होगा, यही विचार कर मैंने यह नाटक रचा। मेरी जन्मकुंडली फिर से देखकर बता सकोगे कि मुझे धन का योग है या नहीं?"

"काकाजी! जो कुछ हुआ, बहुत है। यही विचार करके मैंने ज्योतिष की तिलांजली दे दी है।" मुरली ने जवाब दिया।

पर मुरली का दांपत्य जीवन सुखपूर्वक ही बीता। कमला भले ही शरीर से कुरुपिनी हो, पर उसका दिल निर्मल था। ऐसी पत्नी व संपत्ति को पाने पर मुरली का जीवन मजे में कटा।

मत्स्यगंधी मछुआरे के यहाँ पलकर बड़ी हो गई और बड़ी आकर्षक बन गई।

एक दिन पराशर नामक एक मुनि यमुना के तट पर आया और मछुआरे को पुकारा कि उसे नदी पार करा दे। उस वक़्त वह खाना खा रहा था, इस वजह से उस आगंतुक को नदी पार कराने के लिए अपनी कन्या को भेजा। वह कन्या पराशर मुनि को नाव में चढ़ाकर नदी पार कराने लगी।

नाव में अपने सामने रूपसी कन्या मत्स्यगंधी को देख मुनि पराशर उस पर मोहित हो उठा। उसने धीरे से कन्या के हाथ का स्पर्श किया। मत्स्यगंधी अपने हाथ को खींचते हुए मुस्कुराकर बोली– "महात्मा! क्या आप जैसे मुनियों का मुझ जैसी कन्या का स्पर्श करना उचित है?" पराशर मुनि ऋषि वशिष्ठ का पोता था, वह एक मछुआरे की लड़की थी। उसके तन-बदन में मछलियों की दुर्गंध थी, ऐसी कन्या पर एक मुनि के मोहित हो जाने पर क्या अन्य ऋषि हँस न पड़ेंगे? इस प्रकार मत्स्यगंधी ने मुनि पराशर को कई प्रकार से समझाया, पर पराशर ने अनसुनी का अभिनय करते फिर से उस कन्या का हाथ पकड़ा।

मत्स्यगंधी ने भांप लिया कि ऐसा मोहातुर व्यक्ति उसकी बात पर ध्यान न देगा, नीति, कुल, जाति का भी ख्याल न करेगा, यों विचार कर उसने पराशर के

सामने कई शर्तें रखीं। उसकी शर्तें थीं–उसका कन्यात्व बिगड़ न जावे, उसकी देह की दुर्गंध सदा के लिए दूर हो जाये, जब वह पराशर के साथ एकांत में रहेगी, उसे कोई न देखे और उसका जो पुत्र होगा, वह पराशर से किसी बात में कम न हो। पराशर ने उसकी सारी कामनाओं की पूर्ति की। उसकी देह को सुगंधित बनाया, उन दोनों के चारों तरफ़ घना कुहरा पैदा किया। इसके बाद उसे गर्भ की उत्पत्ति कराकर चला गया। इस पर मत्स्यगंधी तत्काल गर्भवती हो गई, उसने एक पुत्र का जन्म दिया। जन्मधारण के तुरंत बाद बालक ने मत्स्यगंधी से कहा–"माँ! मैं तपस्या करने जाता हूँ। तुम जब मेरी याद करोगी, तभी मैं तुम्हारे पास आ जाऊँगा।"

वही बालक व्यास महर्षि था। वेदों का विभाजन करके वह व्यास बन गये। उनका असली नाम द्वैपायन था। उन्होंने अट्ठारह पुराणों की रचना करके अपने शिष्यों को सुनाया। उन शिष्यों में सुमंत, जैमिनी, पैल, वैशाम्पायन, असित, देवल इत्यादि हैं, उनके साथ शुक भी थे।

इसके बाद मत्स्यगंधी सत्यवती के नाम से अपने पिता के घर थोड़े समय तक रही, बाद शंतनु नामक राजा के साथ विवाह किया और पुत्रों का जन्म दिया।

सूत मुनि के मुंह से यह वृत्तांत सुनकर मुनियों ने पूछा–"महानुभाव! आप ने सत्यवती और व्यास का जन्म-वृत्तांत सुनाकर हमें आनंद पहुँचाया। लेकिन शंतनु तो पुरु वंश के एक प्रसिद्ध राजा हैं न? उन्होंने निम्न जाति की कन्या के साथ कैसे विवाह किया? क्या इसके पहले उन्हें कोई पत्नी नहीं थी? भीष्म तो उन्हीं के पुत्र हैं न? ये सारी बातें स्पष्ट बताइये!"

इस पर सूत महर्षि यों सुनाने लगे:

शंतनु की कहानी

प्राचीन काल में महाभिष नामक एक राजा थे। उन्होंने एक सहस्त्र अश्वमेध

याग किये, इन्द्र को प्रसन्न किया। स्वर्ग में पहुँचकर एक और इन्द्र के समान रहने लगे। वे एक बार अन्य देवताओं के साथ ब्रह्मा के दर्शन करने सत्यलोक में पहुँचे। उसी समय गंगा नदी भी ब्रह्मा को देखने आई और एक ओर खड़ी हो गई।

उस वक़्त झंझावात के बहने से गंगा का वस्त्र थोड़ा हट गया। अन्य देवताओं ने शिष्टतापूर्वक अपनी दृष्टि दूसरी ओर फेर ली। मगर महाभिष शिष्टता का अतिक्रमण करके गंगा के शारीरिक सौंदर्य को देख उस पर मोहित हो उठे और गंगा ने भी इसे भांप लिया और उसने भी महाभिष पर मोह-दृष्टि प्रसारित की।

उन दोनों के बीच परस्पर आकर्षण को भांपकर ब्रह्मा क्रोध में आ गये। उन्होंने उसी समय शाप दे दिया—"आदरणीय व्यक्तियों के सामने तुम दोनों ने अभद्र व्यवहार किया, इसलिए तुम दोनों मानव का जन्म धारण करो।"

इसके बाद महाभिष सोचने लगे कि भूलोक में किसके पुत्र के रूप में जन्मधारण करे, अंत में पुरुवंशी राजा प्रतीप के पुत्र के रूप में जन्म लेने का निश्चय किया।

उन्हीं दिनों में आठ वसु अपनी पत्नियों के साथ महर्षि वसिष्ठ के आश्रम में गये। उनमें प्रभास एक था। प्रभास की पत्नी ने

वसिष्ठ की नंदिनी नामक गाय को देख उसका वृत्तांत पूछा।

प्रभास ने समझाया—"यह तो वसिष्ठ की गाय है। इसका नाम नंदिनी है। कहा जाता है कि इसके थोड़ा-सा दूध पी लेने पर वृद्धावस्था और मृत्यु नहीं होती।"

इस पर प्रभास की पत्नी ने कहा—"तब तो यह गाय मेरी सखी जो उशीनर राजा की पुत्री जितवती है, उसको दे तो वह अपने बुढ़ापे और मृत्यु से बच सकती है। आप उस गाय को मेरे वास्ते ले आइये।"

जो व्यक्ति अपनी पत्नी के मोह का वशीभूत हो जाता है, वह अपना विवेक खो बैठता है। फिर क्या था, प्रभास
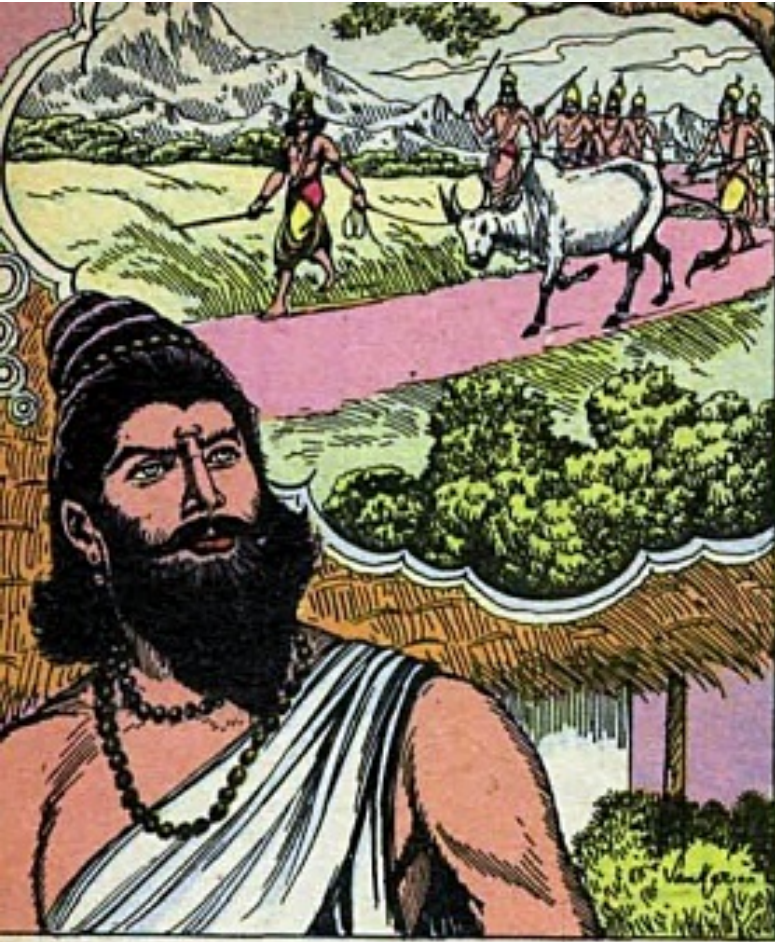
सात वसु दूसरा जन्मधारण करते ही अपने पूर्व रूपों को प्राप्त करेंगे ।"

इसके बाद सभी वसु वसिष्ठ के यहाँ से पृथ्वी लोक को लौट रहे थे । रास्ते में गंगा से उनकी भेंट हो गई । सब ने अपने शापों का परिचय दिया, तब गंगाजी से प्रार्थना की–"माताजी, हम आप के गर्भ से पैदा होंगे । आप हम पर अनुग्रह करके शंतनु की पत्नी बन जाइये । हमारे जन्म के होते ही हमें मार डालिये । ऐसा करने पर हम लोग जल्द ही अपने शाप से मुक्त हो जायेंगे ।"

गंगाजी ने उनकी प्रार्थना सुन ली । तब सब लोग अपने अपने रास्ते चले गये ।

अन्य वसुओं की मदद से नंदिनी गाय को चुराकर अपने साथ ले गये । इसके बाद वसिष्ठ जान गये कि वसुओं ने उसकी गाय की चोरी की है, उन्होंने कुपित होकर उन्हें मानवों के रूप में पैदा होने का शाप दिया । यह समाचार मिलते ही वसुओं ने वसिष्ठ के पास जाकर शाप विमोचन का उपाय बताने का निवेदन किया ।

वसिष्ठ ने उन पर अनुग्रह करके समझाया–"अपनी पत्नी के वास्ते मेरी गाय की चोरी करनेवाला पापी प्रभास मानव के रूप में दीर्घकाल तक जीवित रहकर ब्रह्मचारी बना रहेगा, पर बाकी

एक दिन गंगा के तट पर प्रतीप सूर्य को अर्घ्य दे रहे थे । उस वक़्त एक नव यौवना बिना संकोच के राजा के समीप पहुँची और स्वेच्छापूर्वक उनकी दायीं जांघ पर जा बैठी । उस युवती को देख प्रतीप ने पूछा–"बेटी, तुम कौन हो? क्यों इस प्रकार निर्लज्ज हो मेरी जांघ पर आ बैठी हो?"

वह युवती मुस्कुरा उठी, अनोखी अदा से बोली–"चाहे मैं कोई भी होऊँ, आप को इससे क्या मतलब है? आप तो कामदेव जैसे लगते हैं । इसलिए मैं अपना यौवन आप को समर्पित करने आई हूँ ।"

"बेटी! दायीं जांघ पर बैठने का अधिकार केवल अपनी निजी संतान को ही होता है। इसलिए तुम मेरी पत्नी नहीं बन सकती हो! अलावा इसके मैं एकपत्नी व्रत हूँ! यदि मेरे कोई पुत्र हो जाये तो तुम उसकी पत्नी बन जाओ। यह चिंता मत करो कि मेरे कोई संतान नहीं है। तुम्हारा प्रारब्ध अच्छा है तो मेरी संतान हो सकती है।" यों समझाकर प्रतीप ने उस कन्या को भेज दिया।

इसके थोड़े समय बाद ब्रह्मा के द्वारा शपित महाभिष प्रतीप के पुत्र के रूप में पैदा हुआ और शंतनु नाम से पला और बढ़ा। शंतनु जब युक्त वयस्क हो गया, तब अपने और गंगा के बीच का वार्तालाप सुनाकर राज्य उसके हाथ सौंप दिया और वह तपस्या करने चले गये।

शंतनु अपने पिता के द्वारा प्राप्त राज्य पर शासन करने लगे। एक बार वे गंगा के तट पर शिकार खेलने गये। सौंदर्य में देवता नारियों को मात करनेवाली गंगा को देख यह सोचते विस्मय में आ गये कि आखिर वह युवती कौन हो सकती है! गंगा ने भी उसे देख यह निश्चय किया कि रूप-रेखा और सौंदर्य में वह महाभिष जैसे ही लगते हैं, मोहावेश में आकर वह उसकी ओर देखती ही रह गई।

राजा शंतनु ने उसके समीप जाकर पूछा-"तुम्हें देखते ही मैं तुम पर मोहित हो गया हूँ। क्या मेरी कामना की पूर्ति कर सकती हो?"

इस पर गंगा ने यह निश्चय कर लिया कि वह महाभिष ही है, उससे बोली-"आप को देखने पर मुझे लगता है कि आप राजा प्रतीप के पुत्र हैं और उच्च वंश के हैं। आप के साथ कोई भी नारी प्रेम कर सकती है। मैं भी आप को स्वयं प्यार करती हूँ। लेकिन इसके पहले एक बात स्पष्ट कर देनी है, वह यह है कि मैं जो भी कार्य करूँ, आप को आपत्ति नहीं उठानी चाहिए। अलावा इसके आप को

कभी भी मेरे लिए अप्रिय वचन नहीं कहने चाहिए। यदि आप मेरी इन शर्तों को मानते हैं तो मैं आप की हो जाऊँगी। आप जब इन नियमों का उल्लंघन करेंगे, तभी मैं आप को छोड़ चली जाऊँगी। इसके बाद मुझे दोष देने से कोई लाभ न होगा।" ये शब्द कहते वक्त गंगा ने वसुओं की बातें याद रखी थीं।

गंगा की शर्तों को शंतनु ने मान लिया। गंगा भी काफी समय से उन पर आसक्त थी। इसलिए उनके साथ जाकर सुख-भोगों में लीन हो गई।

राजा शंतनु की पत्नी बनने के एक वर्ष के भीतर गंगा ने एक पुत्र का जन्म दिया और उसी वक्त उसे गंगा जल में फेंक दिया। इस प्रकार साल में एक के हिसाब से सात वसु उसके गर्भ से पैदा हो गये और गंगा जल में फेंके जाकर शाप से मुक्त हो गये।

उस दृश्य को देख राजा शंतनु बड़े दुखी हो गये। गंगा ने सात सुंदर पुत्रों का जन्म देकर निर्दयतापूर्वक उन्हें मार डाला। ऐसी हालत में उसके द्वारा अब उनके वंश की वृद्धि कैसे होगी? यदि वे उसे रोकेंगे तो वह उन्हें छोड़कर चली जाएगी! जो नारी नियमों का पालन नहीं करती, उसके साथ विवाह करने से और क्या हो सकता है?

अब गंगा आठवीं बार गर्भवती बन गई थी। शंतनु ने निश्चय कर लिया कि इस बार पैदा होनेवाले पुत्र की रक्षा करके अपने वंश को बनाये रखना है। इस बीच गंगा ने आठवें पुत्र का जन्म दिया। वही शपित प्रभास था। उस पुत्र को भी गंगाजी पानी में फेंकने को हुई।

पर शंतनु ने उससे विनयपूर्वक कहा— "मैं तो तुम्हारे हर आदेश का पालन करता हूँ। मेरी बात की उपेक्षा मत करो। अपने निजी पुत्र का अंत करना कहाँ का न्याय है? क्या तुम्हारे दिल में करुणा नहीं है? तुम बांझ नारी की तरह जीवन मत बिताओ। जिस पुत्र ने

तुम्हारा कोई अपकार नहीं किया, क्या उसी को तुम स्वयं अपने हाथों से मार डालोगी? यह बात सही है कि मैंने तुम्हें वचन दिया है, पर इस अपराध में मैं कैसे अपने वंश का विनाश मोल सकता हूँ? तुमने सात पुत्रों को मार डाला। कम से कम इसको जीवित रहने दो। इसमें तुम्हारा कोई व्रत भंग नहीं होगा न?"

पर गंगा ने उनकी बातों पर ध्यान नहीं दिया। वह अपने पुत्र का अंत करने चल पड़ी। शंतनु का क्रोध उमड़ पड़ा। उन्होंने गंगा को रोकते हुए कहा—"अरी दुष्टे! तुम्हें मेरी बातों की जरा भी परवाह नहीं है। नरक का भय तक तुम्हें नहीं है। क्या तुम अपने निजी पुत्रों को ही गंगा में डुबो देगी? किस दुष्ट ने तुम्हारा जन्म दिया है? मैं इस पुत्र को मरने नहीं दूंगा।"

इस पर गंगा ने कहा—"आप ने अपने वचन का उल्लंघन किया। आप तो उत्तम व्यक्ति हैं, इसलिए आप को त्यागना न्याय संगत नहीं है। लेकिन इसका कारण भी आप को बता देती हूँ। मैं साधारण नारी नहीं हूँ। गंगा हूँ। देवताओं का एक कार्य संपन्न करने के लिए मैंने आप को वरण किया है। मुनि के शाप के कारण वसुओं को मानव-जन्म धारण करना पड़ा था, इसलिए आप के द्वारा मैंने उनकी माता बनने को मान लिया है। उन लोगों ने मुझसे प्रार्थना की थी कि वे मानवों के रूप में अधिक समय तक जीवित रहना नहीं चाहते। इसलिए मानव-जन्म धारण करते ही मैं उन्हें शाप से मुक्त कर दूं। इस कारण मैं यह पाप कृत्य करने को तैयार हो गई। उनके जन्म के होते ही पानी में उन्हें फेंक दिया। अब जिसने जन्म लिया है, वह आठवाँ वसु है। यह दीर्घ काल तक जीवित रहकर आप के यश का कारण बनेगा। यह युवक वयस्क होने तक मेरे ही पास रहेगा। इसके बाद मैं इसको आप के हाथ सौंप दूंगी। आप इस बात को मान जाइये।" यों समझाकर गंगा अपने आठवें पुत्र को लेकर चली गई।

विवेकशीलता

विजयवर्मा नामक एक सामंत राजा के यहाँ एक हीरे की अंगूठी थी। यह प्रतीति थी कि जो व्यक्ति वह अंगूठी धारण करता है, उसे जान का डर नहीं होता है। यह समाचार मिलते ही उस देश के राजा ने विजयवर्मा को बुलाकर उसकी हीरे की अंगूठी उसे बेचने को कहा। मगर विजयवर्मा ने इनकार करते हुए कहा—"महाराज! क्या प्राणों से कहीं ज्यादा धन का मूल्य होता है? मेरे प्राण के रहते मैं इसे किसी के हाथ नहीं सौंपूंगा।"

इस पर राजा ने अपने मंत्री को बुलवाकर आदेश दिया कि किसी भी प्रकार से विजयवर्मा का वध कराकर हीरे की वह अंगूठी मंगवा दे। मंत्री ने राजा को सलाह दी कि यह कोई अच्छा काम नहीं है। तब राजा ने यह जिम्मेदारी सेनापति को सौंप दी। सेनापति थोड़ी सेना के साथ जाकर विजयवर्मा को मारकर हीरे की अंगूठी ले आया। इस कारण राजा ने मंत्री को बुलवाकर आज्ञा दी कि सेनापति तो विजयवर्मा का वध करके हीरे की अंगूठी ले आया है, इसलिए उसके वास्ते अभिनंदन सभा का आयोजन करो।

मंत्री ने शांत स्वर में उत्तर दिया—"महाराज! अगर सचमुच उस अंगूठी के अन्दर कोई महिमा है तो हमारे सेनापति विजयवर्मा का वध कैसे कर पाये? विजयवर्मा की हत्या करके लौटनेवाले सेनापति का अभिनंदन करना है?" ये शब्द सुनकर राजा अवाक् रह गया।

पिशाचों की सलाह

रुक्मिणी और चन्द्रभानु का हाल ही में विवाह हुआ था। शादी के पहले रुक्मिणी अपने माता-पिता से साड़ियों और गहनों की माँग करती तो वे यही जवाब दिया करते थे—"शादी होने के बाद तुम्हारा पति खुद खरीदकर देगा। हम को क्यों सताती हो?" ये बातें सुनने पर रुक्मिणी के मन में यह विचार घर कर गया कि पति के माने मुँह माँगी चीज़ें खरीदकर देनेवाला व्यक्ति है।

चन्द्रभानु एक छोटी-सी नौकरी किया करता था। बचपन में जब उसके माँ-बाप मर गये, तब उसकी नानी ने उसे पाल-पोसकर बड़ा किया और उसकी शादी भी की। पर बचपन में उसने चन्द्रभानु को जमीन में गढ़े खजानों की कहानियाँ सुनाकर उसके मन में यह भ्रम पैदा किया कि उसे भी कभी न कभी कोई न कोई खजाना हाथ लग जाएगा। पर चन्द्रभानु केवल अपनी क़िस्मत पर निर्भर न रहकर यह विचार करने लगा कि पिशाचों की मदद से अपार धन कमाया जा सकता है। इसलिए उनसे मैत्री करने के ख्याल से वह गुप्त रूप से श्मशानों में घूमा करता था। शादी के होते ही श्मशान के समीप एक उजड़े घर में निवास करने लगा।

रुक्मिणी ने उस मकान को देखते ही पूछा—"यह कोई घर है या मसान? चलो, हम गाँव के बीच कोई बढ़िया मकान बनवा लेंगे। इस घर में मैं एक पल भी नहीं रह सकती।"

चन्द्रभानु अचरज में आकर बोला—"घर बनाने का मतलब क्या तुम घोंसला बनाना समझती हो? कोई न कोई खजाना हाथ लगने दो, तब हम अच्छा मकान बनवा लेंगे।"

सरोज गुप्त

"निधि के मिलने का मतलब क्या नीर मिलना समझते हो?" रुक्मिणी ने पूछा।

"देखती रह जाओ! तुम्हें खुद मालूम होगा।" चन्द्रभानु ने कहा।

उस दिन रात को गाढ़ी नींद सोनेवाली रुक्मिणी चौंककर उठ बैठी। श्मशान की ओर से कोई कोलाहल सुनाई दे रहा था।

उसने अपने पति को जगाकर पूछा—"सुनो, यह कैसा कोलाहल है?"

"पिशाच होंगे! मैं उनसे बात कर आता हूँ।" यों कहते चन्द्रभानु उठ बैठा।

रुक्मिणी ने घबराकर कहा—"तुम पागल तो नहीं हो गये हो? पिशाचों से बात करना कैसा? कल हम यह घर खाली कर देंगे।"

"तुम्हारी अक़्ल भी चरने गई है। मैंने पिशाचों के साथ दोस्ती करने के ख्याल से ही श्मशान के पास यह मकान लिया है। ये पिशाच होहल्ला जरूर मचाते हैं, पर किसी की कोई हानि नहीं करते। उनके साथ दोस्ती करने पर वे गढ़े खजानों का रहस्य बता देंगे।" यों रुक्मिणी को समझाकर चन्द्रभानु श्मशान की ओर चल पड़ा।

श्मशान के पास एक बरगद पर दो पिशाच कोलाहल करते पल्थियाँ मार रहे थे। चन्द्रभानु को देखते ही पिशाचों ने पूछा—"तुम कौन हो? यहाँ पर आने की तुम्हारी कैसी हिम्मत हुई?"

"हिम्मत नहीं, तुम लोगों पर मैं प्रसन्न हूँ। मनुष्यों से कहीं ज़्यादा तुम्हीं लोग भले हो! इसीलिए तुम लोगों से दोस्ती करने आया हूँ।" चन्द्रभानु ने उत्तर दिया।

इस पर पिशाचों ने कोई आपत्ति नहीं की। चन्द्रभानु थोड़ी देर तक उनसे बातचीत कर अपने घर लौट आया।

डरते-सहमते अपने पति का इंतजार करनेवाली रुक्मिणी ने पूछा—"क्या तुम्हें पिशाच दिखाई दिये? खजाने का रहस्य बता दिया?"

"अरी, इतनी जल्दी कैसे? हमारी दोस्ती थोड़ी पक्की हो जाने दो! फिर देखा जायगा।" चन्द्रभानु ने कहा।

इसके बाद प्रति दिन रात को चन्द्रभानु पिशाचों के पास जाता, थोड़ी देर तक उनसे बातचीत कर लौट आता था। एक दिन श्मशान से लौटकर चन्द्रभानु ने अपनी पत्नी से कहा–"कल मैं पिशाचों को अपने घर दावत पर निमंत्रण देता हूँ। तुम बढ़िया रसोई बनाकर रखो।"

चन्द्रभानु का निमंत्रण पाकर दो पिशाच आधी रात के वक़्त उसके घर पहुँचे। रुक्मिणी ने उन्हें खाना परोस दिया।

चन्द्रभानु ने विनम्र स्वर में निवेदन किया–"मैं तुम लोगों के वास्ते और बढ़िया दावत देता, लेकिन मैं गरीब हूँ। कहीं गढ़े खजाने का रहस्य बतला दोगे तो तुम्हें राजोचित दावत रोज दिया करूँगा।"

ये बातें सुन पिशाच आश्चर्य का अभिनय करते बोले–"जानते हो, हमारे इस प्रकार पिशाच बन जाने का कारण क्या है? तुम्हारे जैसे खजाने पाने के ख़्याल से जंगलों और उजड़े घरों को खोदते एक घर की दीवार के नीचे हम दबकर मर गये। इसके बाद इस तरह पिशाच बनकर हम नाना प्रकार की यातनाएँ झेल रहे हैं।"

"तब तो मुझे खजाने के हाथ लगने की कोई आशा नहीं है?" चन्द्रभानु ने विस्मय में आकर पूछा।

"खजाने हाथ लग जाते हैं तो उसमें तुम्हारा पुरुषार्थ क्या होगा? यदि प्रयत्न करके देखो कि तुम अपनी ताक़त के बल पर क्या से क्या बन सकते हो?" यों समझाकर पिशाच हठात् अदृश्य हो गये।

मानो चन्द्रभानु को यही सबक़ सिखाने के लिए वे पिशाच फिर कभी चन्द्रभानु को दिखाई तक न दिये।

चन्द्रभानु ने भी क़िस्मत के खजाने की बात भुला दी। एक हफ़्ते के अन्दर श्मशान के निकट का मकान बदलकर गाँव के बीच उसने दूसरा मकान किराये पर ले लिया। उस दिन से वह कड़ी मेहनत करते अपने जीवन को सार्थक बना पाया।

अन्नदान का फल

उल्लूकभट्ट जब भद्रगिरि का राजप्रतिनिधि बनकर आया, तब कुशल नामक एक छोटे कर्मचारी ने अपने घर एक नया नियम रखा। वह यह था कि हर जून कोई अतिथि भर पेट भोजन करके विश्राम करेगा, उसके चले जाने के बाद ही घर के लोग भोजन करेंगे।

थोड़े दिन बाद कुशल अचानक बीमार पड़ गया। जब उसके मन में जीने की आशा न रही, तब अपने पुत्र को बुलाकर समझाया–"बेटा, मेरे मरने के बाद भी जब तक उल्लूकभट राजप्रतिनिधि के रूप में यहाँ रहेगा, तब तक यह नियम मत तोड़ो कि हमारे घर के लोगों के भोजन करने के पहले एक अतिथि को भर पेट खाना खिलाना चाहिए।"

"पिताजी! इस नियम को तोड़ने पर क्या होगा? अपनी ताक़त से बढ़कर हम यह अन्नदान क्यों करे?" पुत्र ने पूछा।

"सुनो बेटा, यह उल्लूकभट्ट जो है, नालायक़ है! रिश्वतख़ोर है! स्वार्थी और भ्रष्टाचारियों के हाथ बिक गया है। हर चीज़ में मिलावट है! पूछने की हिम्मत करनेवाला कोई नहीं है। हम सुनते हैं कि विष भरा भोजन करके लोग मरते जा रहे हैं! इसी वास्ते यह अन्नदान करना है! हमें तो सावधान रहना है।" कुशल ने समझाया।
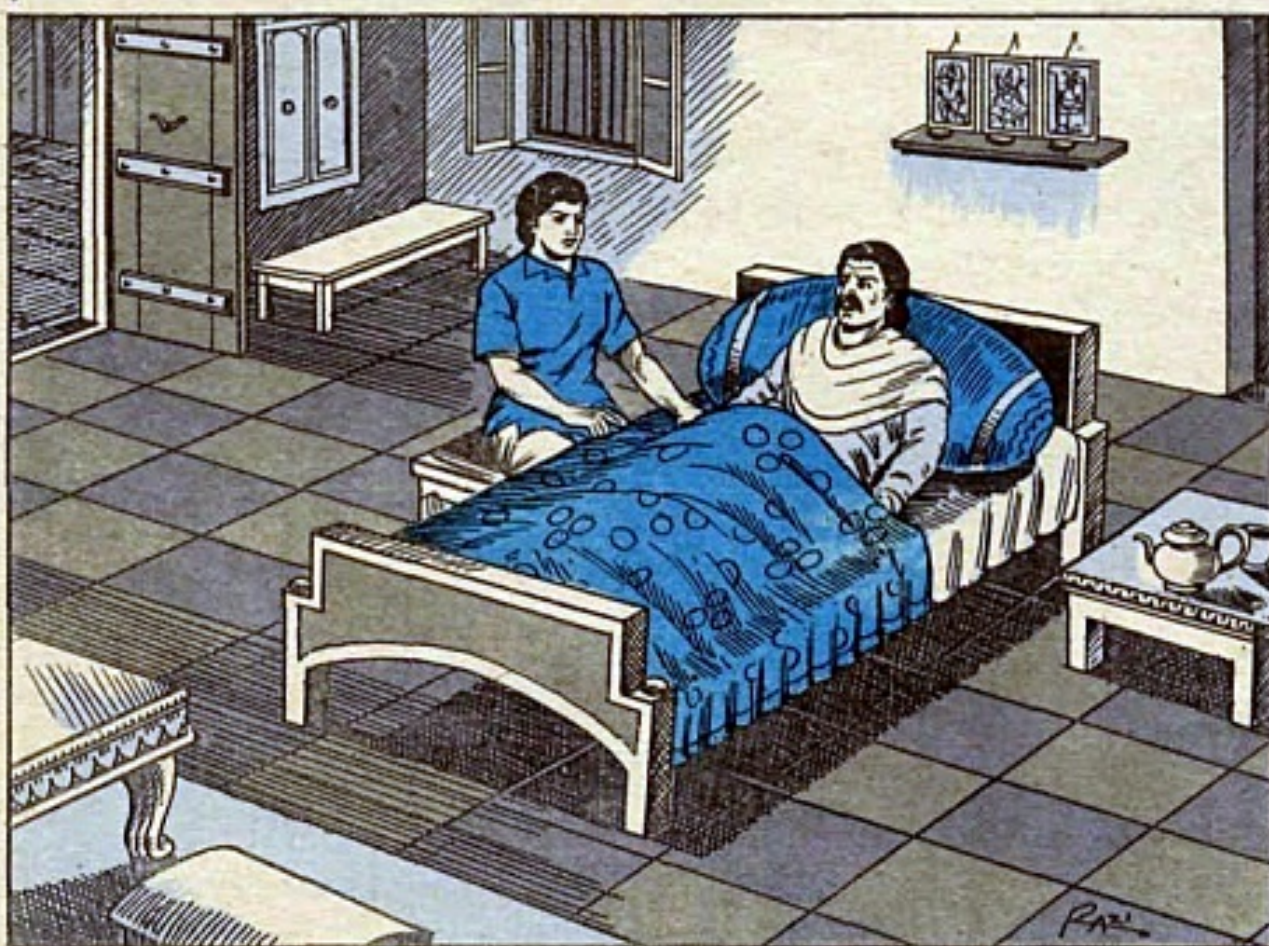
फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां जून १९७९ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

Devidas Kasbekar

★

Devidas Kasbekar

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियां दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ अप्रैल १० तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियां कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

फ़रवरी के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : हम देश के हैं सिपाही !

द्वितीय फोटो : दुश्मन की हम करें तबाही !!

प्रेषक : तिलक राजपुरी, मकान नं. डब्लयू. एस. ५६, बस्ती : शेक मोहल्ला : सन्नान, जलंधर

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 2 & 3, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor : NAGI REDDI.

फोटोग्राफी को अपना शौक बनाइये आसानी से, बिना ज़्यादा खर्च किए.

कैमरे के शौकीनों और फोटोग्राफी की शुरूआत करनेवालों के लिए-स्माइली और लूना कैमरों की ओर से अचरजभरी नयी दुनिया.

- शुरू करनेवालों के लिए आदर्श.
- १२५ रोल फिल्म पर ४ × ४ सें. मी. की १२ तस्वीरें

- १२० रोल फिल्म पर ६ × ६ सें. मी. की १२ तस्वीरें
- इलेक्ट्रॉनिक फ्लश भी इस्तेमाल की जा सकती है.

उत्पादक :
फोटो इंडिया
८७ सरदार पटेल रोड, सिकन्दराबाद ५०० ००३.

massH-FI/35/78 hin
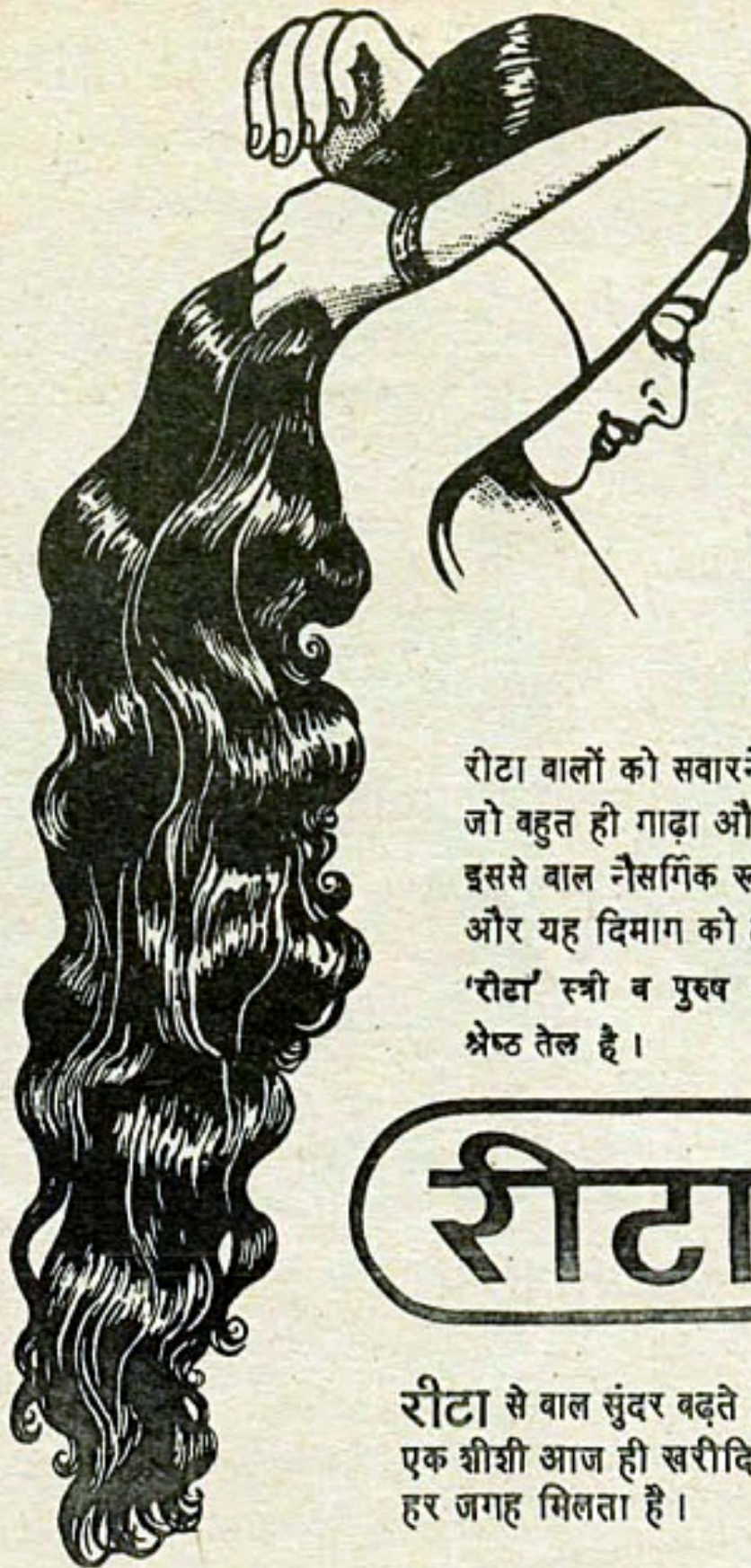
आपके बालों को
जरूरत है
रीटा द्वारा
देखभाल की
रीटा बालों को सवारने का एक उत्तम साधन है,
जो बहुत ही गाढ़ा और मोहक सुगंधवाला है।
इससे बाल नैसर्गिक रूप से घने बढ़ते हैं
और यह दिमाग को ठंडक पहुंचाता है।
'रीटा' स्त्री व पुरुष दोनों के लिए
श्रेष्ठ तेल है।
रीटा
RITA
RITA
रीटा से बाल सुंदर बढ़ते हैं।
एक शीशी आज ही खरीदिये।
हर जगह मिलता है।
पेटो कंपनी, बम्बई • कलकत्ता • मद्रास
Sona 31 HI

ज़िन्दगी की सुहानी चीज़ों की तरह
हमेशा ताज़ा, हमेशा सजीव !
Pond's
Dreamflower talc
flower talc Pond
पॉण्ड्स
ड्रीमफ़्लावर
टाल्क
जिसकी सुगंध आपको हमेशा से पसन्द है
Pond's
CP-1829